ख़ुतबात–1

ईमान की हक़ीक़त

सय्यद अबुल आला मौदूदी

ईमान की हक़ीक़त

(ख़ुतबात-1)

मौलाना सैयद अबुल आला मौदूदी (रह०)

अनुवादक

डॉ० कौसर यज़दानी नदवी

विषय–सूची

بِسۡمِ اللّٰہِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِیۡمِ ○

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

'अल्लाह के नाम से जो बड़ा कृपाशील, अत्यन्त दयावान है ।'

भूमिका

इस किताब में इस्लामी जगत् के एक बड़े आलिम मौलाना सैयद अबुल आला मौदूदी (रह०) के उन ख़ुतबों (भाषणों) को जमा करके प्रकाशित किया गया है, जो उन्होंने सन् 1938 ई० में दारुल इस्लाम पठानकोट (पंजाब) की जामा मस्जिद में कम पढ़े-लिखे आम मुसलमानों के सामने दिए थे। इन ख़ुतबों में इतने सादा और प्रभावकारी अन्दाज़ में इस्लाम की शिक्षाओं को उनकी रूह के साथ पेश किया गया है कि इन्हें सुनकर या पढ़कर बेशुमार लोगों की ज़िन्दगियाँ सुधर गईं और वे बुराइयों को छोड़ने और भलाइयों को अपनाने पर मजबूर हो गए। इन लोगों में मुसलमान भी हैं और ग़ैर मुसलिम भी।

इन ख़ुतबों की इन्हीं ख़ूबियों की वजह से दुनिया की अनेक भाषाओं में इनके तर्जुमे बड़ी तादाद में प्रकाशित किए गए और वे सभी लोकप्रिय हुए।

मौलाना मौदूदी की एक अन्य लोकप्रिय किताब दीनियात (इस्लाम धर्म) में इस्लामी अक़ीदों की तफ़सील बयान की गई है और इस्लाम के शरई निज़ाम (व्यावहारिक व्यवस्था) के बारे में भी कुछ जानकारी उपलब्ध कराई गई है और अब इस किताब में दीन की रूह (स्प्रिट) और इबादतें तफ़सील से बयान कर दी गई हैं। उक्त दोनों किताबों को मिलाकर पढ़ने के बाद दीन को समझना और दीन पर चलना भी आसान होगा और फिर दीन पर अमल करने के नतीजे में इंसान और इंसानी समाज में एक ख़ुशगवार तब्दीली देखने में आएगी और लोग दीन के फ़ायदों और बरकतों को अपनी आँखों से ख़ुद देख सकेंगे।

जो लोग इन ख़ुतबों को जुमा में सुनाना चाहें वे पहले हर ख़ुतबे के शुरू में मसनून ख़ुतबा पढ़ें। दूसरा ख़ुतबा लाज़िमी तौर पर अरबी में दिया जाना चाहिए।

यह बात भी बता देना ज़रूरी मालूम होता है कि ये ख़ुतबे जिन हालात में दिए गए थे वे अब बहुत कुछ बदल चुके हैं, इसलिए पढ़ते वक़्त उन हालात को नज़र में रखना चाहिए।

इस्लामी साहित्य ट्रस्ट (रजि०) हिन्दी ज़ुबान में इस्लामी शिक्षाओं पर आधारित किताबें तैयार करने की सेवा में लगा हुआ है। इस किताब को आपकी सेवा में पेश करने का सौभाग्य हमें मिला इसपर हम अल्लाह का शुक्र अदा करते हैं।

अल्लाह से दुआ है कि वह इस किताब को ज़्यादा से ज़्यादा मुफ़ीद बनाए।

नसीम ग़ाज़ी फ़लाही

अध्यक्ष

इस्लामी साहित्य ट्रस्ट

मुसलमान होने के लिए इल्म की ज़रूरत

अल्लाह का सबसे बड़ा एहसान

मुसलमान भाइयो ! हर मुसलमान सच्चे दिल से यह समझता है कि दुनिया में ख़ुदा की सबसे बड़ी नेमत 'इस्लाम' है । हर मुसलमान इस बात पर अल्लाह का शुक्र अदा करता है कि उसने नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की उम्मत में उसको शामिल किया और इस्लाम की नेमत उसको दी । ख़ुद अल्लाह तआला भी इसको अपने बन्दों पर अपना सबसे बड़ा इनाम ठहराता है । जैसा कि क़ुरआन पाक में आया है—

اَلْيَوْمَ اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ

وَ اَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ نِعْمَتِىْ وَرَضِيْتُ لَكُمُ الْاِسْلَامَ دِيْنًا ○

आज मैंने तुम्हारा दीन तुम्हारे लिए कामिल कर दिया और तुमपर अपनी नेमत पूरी कर दी और तुम्हारे लिए इस बात को पसन्द कर लिया कि तुम्हारा दीन इस्लाम हो । (क़ुरआन, 5:3)

एहसान का तक़ाज़ा

यह एहसान जो अल्लाह ने आपपर किया है उसका हक़ अदा करना आपपर फ़र्ज़ है, क्योंकि जो आदमी किसी के एहसान का हक़ अदा नहीं करता वह एहसान-फ़रामोश होता है और सबसे बदतर एहसान-फ़रामोशी यह है कि इनसान अपने ख़ुदा के एहसान का हक़ भूल जाए । अब आप पूछेंगे कि ख़ुदा के एहसान का हक़ किस तरह अदा किया जाए ? मैं इसके जवाब में कहूँगा कि जब ख़ुदा ने आपको हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की उम्मत में शामिल किया है तो उसके इस एहसान का सही शुक्र यह है कि आप मुहम्मद (सल्ल०) की पूरी पैरवी करें । जब ख़ुदा ने आपको मुसलमानों की मिल्लत में शामिल किया है तो उसकी इस मेहरबानी का हक़ आप इसी तरह अदा कर सकते हैं कि आप पूरे मुसलमान बनें । इसके सिवा ख़ुदा के इतने बड़े एहसान का हक़ आप और किसी तरह अदा नहीं कर सकते और यह हक़ अगर आपने अदा नहीं किया तो जितना बड़ा

ख़ुदा का एहसान है उतना ही बड़ा उसकी एहसान-फ़रामोशी का वबाल भी होगा । ख़ुदा हम सबको इस वबाल से बचाए—

आमीन !!!

मुसलमान बनने के लिए पहला क़दम

इसके बाद आप दूसरा सवाल यह करेंगे कि आदमी पूरा मुसलमान किस तरह बन सकता है ? इसका जवाब बहुत फैलाव चाहता है और आइन्दा जुमे के ख़ुतबों में इसी का एक-एक हिस्सा आपके सामने खोल-खोलकर बयान किया जाएगा । लेकिन आज के ख़ुतबे में मैं आपके सामने वह चीज़ बयान करता हूँ जो मुसलमान बनने के लिए सबसे ज़रूरी है, जिसको इस रास्ते का सबसे पहला क़दम समझना चाहिए ।

क्या मुसलमान नस्ल का नाम है ?

ज़रा दिमाग़ पर ज़ोर डालकर सोचिए कि आप 'मुसलमान' का जो लफ़्ज़ बोलते हैं उसका मतलब क्या है ? क्या इनसान माँ के पेट से 'इस्लाम' साथ लेकर आता है ? क्या आदमी सिर्फ़ इस बिना पर मुसलमान होता है कि वह मुसलमान का बेटा और मुसलमान का पोता है ? क्या मुसलमान भी उसी तरह एक मुसलमान पैदा होता है जिस तरह एक ब्राह्मण का बच्चा ब्राह्मण होता है, एक राजपूत का बेटा राजपूत और एक शूद्र का बेटा शूद्र ? क्या मुसलमान किसी नस्ल या जाति-बिरादरी का नाम है कि जिस तरह एक अँग्रेज़, अँग्रेज़ी क़ौम में पैदा होने की वजह से अँग्रेज़ होता है और एक जाट, जाट क़ौम में पैदा होने की वजह से जाट होता है । उसी तरह एक मुसलमान सिर्फ़ इस वजह से मुसलमान है कि वह मुसलमान नाम की क़ौम में पैदा हुआ है ? ये सवाल जो मैं आप से पूछ रहा हूँ,इनका आप क्या जवाब देंगे ? आप यही कहेंगे कि नहीं साहब ! मुसलमान इसको नहीं कहते । मुसलमान नस्ल की वजह से मुसलमान नहीं होता बल्कि इस्लाम को अपनाने से मुसलमान बनता है और अगर वह इस्लाम छोड़ दे तो मुसलमान नहीं रहता । एक आदमी चाहे ब्राह्मण हो या राजपूत, अँग्रेज़ हो या जाट, पंजाबी हो या हब्शी, जब उसने इस्लाम क़बूल किया तो मुसलमानों में शामिल हो जाएगा । और अगर एक दूसरा आदमी जो मुसलमान के घर पैदा हुआ है, अगर वह इस्लाम की पैरवी छोड़ दे तो वह मुसलमानों

की जमाअत से निकल जाएगा, चाहे वह सय्यद का बेटा हो या पठान का।

क्यों भाइयो ! आप मेरे सवाल का यही जवाब देंगे न ? अच्छा तो अब ख़ुद आप ही के जवाब से यह बात मालूम हो गई कि ख़ुदा की यह सबसे बड़ी नेमत जो आपको मिली है वह कोई नस्ली चीज़ नहीं है कि माँ-बाप से विरासत में आप ही आप मिल जाए और ख़ुद ब ख़ुद सारी उम्र आपके साथ लगी रहे, चाहे आप इसकी परवाह करें या न करें, बल्कि यह ऐसी नेमत है कि इसके हासिल करने के लिए ख़ुद आपकी कोशिश शर्त है । अगर आप कोशिश करके इसे हासिल करें तो यह आपको मिल सकती है और अगर आप इसकी परवाह न करें तो यह आपसे छिन भी सकती है । अल्लाह बचाए ।

इस्लाम लाने का मतलब

अब आगे बढ़िए, आप कहते हैं कि इस्लाम क़बूल करने से आदमी मुसलमान बनता है । सवाल यह है कि इस्लाम क़बूल करने का मतलब क्या है ? क्या इस्लाम क़बूल करने का यह मतलब है कि जो आदमी बस ज़बान से कह दे कि मैं मुसलमान हूँ या मुसलमान बन गया हूँ, वह अल्लाह तआला के नज़दीक मुसलमान है ? या, इस्लाम क़बूल करने का मतलब यह है कि एक आदमी अरबी के कुछ बोल बिना समझे-बूझे ज़बान से अदा कर दे और बस वह मुसलमान हो गया ? आप ख़ुद बताइए कि इस सवाल का आप क्या जवाब देंगे ? आप यही कहेंगे ना कि इस्लाम क़बूल करने का मतलब यह है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने जो तालीम दी है उसको आदमी जानकर, समझकर, दिल से क़बूल करे और उसके मुताबिक़ अमल करे । जो ऐसा करे वह मुसलमान है और जो ऐसा न करे वह मुसलमान नहीं है ।

पहली ज़रूरत— इल्म

यह जवाब जो आप देंगे, इससे आप ही आप यह बात खुल गई कि इस्लाम पहले इल्म का नाम है और इल्म (ज्ञान) के बाद अमल का नाम है । एक आदमी इल्म के बग़ैर ब्राह्मण हो सकता है क्योंकि वह ब्राह्मण

पैदा हुआ है और ब्राह्मण ही रहेगा । एक आदमी इल्म के बग़ैर जाट हो सकता है क्योंकि वह जाट पैदा हुआ है और जाट ही रहेगा, मगर एक आदमी इल्म के बिना मुसलमान नहीं हो सकता क्योंकि मुसलमान पैदाइश से मुसलमान नहीं हुआ करता, बल्कि इल्म से होता है । जब तक उसको यह इल्म न हो कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की तालीम क्या है, वह उसपर ईमान कैसे ला सकता है और उसके अनुसार अमल कैसे कर सकता है ? जब वह जानकर और समझकर ईमान ही न लाया तो मुसलमान कैसे हो सकता है ? बस मालूम हुआ कि जिहालत और अज्ञान के साथ मुसलमान होना और मुसलमान रहना नामुमकिन है । हर आदमी जो मुसलमान के घर में पैदा हुआ है, जिसका नाम मुसलमानों जैसा है, जो मुसलमानों जैसे कपड़े पहनता है और जो अपने आपको मुसलमान कहता है असल में वह मुसलमान नहीं है, बल्कि मुसलमान दरअसल सिर्फ़ वह आदमी है जो इस्लाम को जानता हो और फिर जान-बूझकर उसको मानता हो । एक काफ़िर और एक मुसलमान में असली फ़र्क़ नाम का नहीं है कि वह ल्यूपोल्ड या रणजीत सिंह या राम प्रसाद है और यह अब्दुल्लाह है; इसलिए वह काफ़िर है और यह मुसलमान ? इसी तरह एक काफ़िर और एक मुसलमान में असली फ़र्क़ लिबास का भी नहीं है कि वह पतलून पहनता है या धोती बाँधता है और यह पाजामा पहनता है, इसलिए वह काफ़िर है और यह मुसलमान । बल्कि असली फ़र्क़ इन दोनों के बीच इल्म का है । वह काफ़िर इसलिए है कि वह नहीं जानता कि ख़ुदा का उससे और उसका ख़ुदा से क्या रिश्ता है और उस पैदा करनेवाले की मरज़ी के मुताबिक़ दुनिया में ज़िन्दगी बसर करने का सीधा रास्ता क्या है ? अगर यही हाल एक मुसलमान के बच्चे का भी हो तो फिर बताइए कि आप उसमें और एक काफ़िर में किस बिना पर फ़र्क़ करते हैं और क्यों यह कहते हैं कि वह तो काफ़िर है और यह मुसलमान है ?

हज़रात ! यह बात जो मैं कह रहा हूँ इसको ज़रा कान लगाकर सुनिए और ठण्डे दिल से इसपर विचार कीजिए । आपको अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि ख़ुदा की यह सबसे बड़ी नेमत जिसपर आप शुक्र और एहसानमंदी ज़ाहिर करते हैं, इसका हासिल होना और हासिल न होना दोनों बातें इल्म (ज्ञान) पर निर्भर हैं । अगर इल्म न हो तो यह नेमत आदमी को मिल

ही नहीं सकती और अगर थोड़ी-बहुत मिल भी जाए तो अज्ञानता के कारण हर वक़्त यह ख़तरा है कि यह सबसे बड़ी नेमत उसके हाथ से चली जाएगी। सिर्फ़ नादानी के कारण वह अपने नज़दीक यह समझता रहेगा कि मैं अभी तक मुसलमान हूँ, हालाँकि दरअसल वह मुसलमान नहीं होगा। जो आदमी यह जानता ही न हो कि इस्लाम और कुफ़्र में क्या फ़र्क़ है और ख़ुदा को एक मानने और उसके साथ साझी ठहराने में क्या भेद है, उसकी मिसाल तो बिलकुल ऐसी है जैसे कोई आदमी अँधेरे में एक पगडंडी पर चल रहा हो। हो सकता है कि सीधी लकीर पर चलते-चलते आप ही आप उसके क़दम किसी दूसरे रास्ते की तरफ़ मुड़ जाएँ और उसे यह ख़बर भी न हो कि मैं सीधी राह से हट गया हूँ, और यह भी हो सकता है कि रास्ते में कोई दज्जाल व दानव खड़ा हुआ मिल जाए और उससे कहे कि अरे मियाँ! तुम अँधेरे में रास्ता भूल जाओगे, आओ मैं तुम्हें मंज़िल तक पहुँचा दूँ। बेचारा अँधेरे का मुसाफ़िर ख़ुद अपनी आँखों से नहीं देख सकता कि सीधा रास्ता कौन-सा है, इसलिए नादानी के साथ अपना हाथ उस दज्जाल के हाथ में दे देगा और वह उसको भटकाकर कहीं से कहीं ले जाएगा। ये ख़तरे उस आदमी को इसी लिए तो पेश आते हैं कि उसके पास ख़ुद कोई रौशनी नहीं है और वह ख़ुद अपने रास्ते के निशानों को नहीं देख सकता। अगर उसके पास रौशनी मौजूद हो तो ज़ाहिर है कि न वह रास्ता भूलेगा और न कोई दूसरा उसको भटका सकेगा। बस इसी से समझ लीजिए कि मुसलमान के लिए सबसे बड़ा ख़तरा अगर कोई है तो यही कि वह ख़ुद इस्लाम की तालीम से नावाक़िफ़ हो, ख़ुद यह न जानता हो कि क़ुरआन क्या सिखाता है और हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) क्या हिदायत दे गए हैं। इस जिहालत की वजह से वह ख़ुद भी भटक सकता है और दूसरे दज्जाल भी उसको भटका सकते हैं। लेकिन अगर उसके पास इल्म (ज्ञान) की रौशनी हो तो वह ज़िन्दगी के हर क़दम पर इस्लाम के सीधे रास्ते को देख सकेगा, हर क़दम पर कुफ़्र, शिर्क, गुमराही और बदकारी व गुनाह के जो टेढ़े रास्ते बीच में आएँगे उनको पहचानकर उनसे बच सकेगा और जो कोई रास्ते में उसको बहकानेवाला मिलेगा तो उसकी दो-चार बातें ही सुनकर वह ख़ुद समझ जाएगा कि वह बहकानेवाला आदमी है, उसकी पैरवी नहीं करनी चाहिए।

इल्म की अहमियत

भाइयो ! यह इल्म जिसकी ज़रूरत मैं आपसे बयान कर रहा हूँ उसपर आपके और आपकी औलाद के मुसलमान होने और मुसलमान रहने का दारोमदार है । यह कोई मामूली चीज़ नहीं है कि इससे बेपरवाई की जाए । आप अपनी खेती-बाड़ी के काम में ग़फ़लत नहीं करते, अपनी फ़सलों को पानी देने और उनकी देखभाल करने में लापरवाही नहीं करते, अपने मवेशियों को चारा देने में ग़फ़लत नहीं करते, अपने पेशे के कामों में ग़फ़लत नहीं करते, सिर्फ़ इसलिए कि अगर ग़फ़लत करेंगे तो भूखे मर जाएँगे और जान जैसी प्यारी चीज़ चली जाएगी । फिर मुझे बताइए कि उस इल्म के हासिल करने में ग़फ़लत क्यों करते हैं जिसपर आपके मुसलमान बनने और मुसलमान रहने का दारोमदार है ? क्या इसमें यह ख़तरा नहीं है कि ईमान जैसी प्यारी चीज़ चली जाएगी ? क्या ईमान, जान से ज़्यादा प्यारी चीज़ नहीं है ? आप जान का बचाव करनेवाली चीज़ों के लिए जितना वक़्त और जितनी मेहनत ख़र्च करते हैं, क्या उस वक़्त और मेहनत का दसवाँ हिस्सा भी ईमान का बचाव करनेवाली चीज़ों के लिए ख़र्च नहीं कर सकते ?

मैं आपसे यह नहीं कहता कि आप में से हर आदमी मौलवी बने । बड़ी-बड़ी किताबें पढ़े और अपनी उम्र के दस-बारह साल पढ़ने में लगा दे । मुसलमान बनने के लिए इतना पढ़ने की ज़रूरत नहीं । मैं सिर्फ़ यह चाहता हूँ कि आप में का हर आदमी दिन-रात के चौबीस घण्टों में से सिर्फ़ एक घण्टा दीन का इल्म सीखने में ख़र्च करे । कम से कम इतना इल्म हर मुसलमान बच्चे, बूढ़े और जवान को हासिल होना चाहिए कि क़ुरआन जिस मक़सद के लिए और जो तालीम लेकर आया है उसका निचोड़ जान लें । नबी (सल्ल०) जिस चीज़ को मिटाने के लिए और उसकी जगह जो चीज़ क़ायम करने के लिए तशरीफ़ लाए थे उसको ख़ूब पहचान लें और ज़िन्दगी के उस ख़ास तरीक़े से वाक़िफ़ हो जाएँ जो अल्लाह ने मुसलमानों के लिए मुक़र्रर किया है । इतने इल्म के लिए बहुत ज़्यादा वक़्त की ज़रूरत नहीं है, और अगर ईमान प्यारा हो तो इसके लिए एक घण्टा रोज़ निकालना कुछ मुशकिल नहीं ।

मुसलमान और काफ़िर का असली फ़र्क़

मुसलमान और काफ़िर में फ़र्क़ क्यों ?

मुसलमान भाइयो ! हर मुसलमान अपने नज़दीक यह समझता है और आप भी ज़रूर ऐसा ही समझते होंगे कि मुसलमान का दर्जा काफ़िर से ऊँचा है । मुसलमान को ख़ुदा पसन्द करता है और काफ़िर को नापसन्द करता है । मुसलमान ख़ुदा के यहाँ बख़्शा जाएगा और काफ़िर की बख़शिश न होगी । मुसलमान जन्नत में जाएगा और काफ़िर दोज़ख़ में जाएगा । आज मैं चाहता हूँ कि आप इस बात पर ग़ौर करें कि मुसलमान और काफ़िर में इतना बड़ा फ़र्क़ आख़िर क्यों होता है ? काफ़िर भी आदम की औलाद है और आप भी । काफ़िर भी ऐसा ही इनसान है जैसे आप हैं । वह भी आपके ही जैसे हाथ, पाँव, आँख और कान रखता है । वह भी इसी हवा में साँस लेता है, यही पानी पीता है, इसी ज़मीन पर बसता है, यही पैदावार खाता है, इसी तरह पैदा होता और इसी तरह मरता है । उसी ख़ुदा ने उसको भी पैदा किया है जिसने आपको पैदा किया है । फिर आख़िर क्यो उसका दर्जा नीचा है और आपका ऊँचा ? आपको जन्नत क्यों मिलेगी और वह दोज़ख़ में क्यों डाला जाएगा ?

क्या सिर्फ़ नाम का फ़र्क़ है ?

यह बात ज़रा सोचने की है । आदमी और आदमी में इतना बड़ा फ़र्क़ सिर्फ़ इतनी-सी बात से तो नहीं हो सकता कि आप अब्दुल्लाह, अब्दुर्रहमान और ऐसे ही दूसरे नामों से पुकारे जाते हैं और वह दीनदयाल, करतार सिंह और राबर्टसन जैसे नामों से पुकारा जाता है । या आप ख़तना कराते हैं और वह नहीं कराता, या आप गोश्त खाते हैं और वह नहीं खाता । अल्लाह तआला जिसने तमाम इनसानों को पैदा किया है और जो सबका पालनहार है, ऐसी नाइनसाफ़ी व ज़ुल्म तो कभी कर ही नहीं सकता कि इन छोटी-छोटी बातों पर अपने बन्दों में फ़र्क़ करे और एक बन्दे को जन्नत में भेजे और दूसरे को दोज़ख़ में पहुँचा दे ।

असली फ़र्क़— इस्लाम और कुफ़्र

जब यह बात नहीं है तो फिर सोचिए कि दोनों में असली फ़र्क़ क्या है ? इसका जवाब सिर्फ़ एक है और वह यह है कि दोनों में असली फ़र्क़ 'इस्लाम' और 'कुफ़्र' की वजह से होता है । इस्लाम के मानी ख़ुदा की फ़रमाँबरदारी के हैं और कुफ़्र के मानी ख़ुदा की नाफ़रमानी के । मुसलमान और काफ़िर दोनों इनसान हैं, दोनों ख़ुदा के बन्दे हैं, मगर एक इनसान इसलिए बड़ाईवाला व अफ़ज़ल हो जाता है कि वह अपने मालिक को पहचानता है, उसके हुक्म की पैरवी करता है और उसकी नाफ़रमानी के अंजाम से डरता है । और दूसरा इनसान इसलिए ऊँचे दर्जे से गिर जाता है कि वह अपने मालिक को नहीं पहचानता और उसकी फ़रमाँबरदारी नहीं करता । इसी वजह से मुसलमान से ख़ुदा ख़ुश होता है और काफ़िर से नाराज़, मुसलमान को जन्नत देने का वादा करता है और काफ़िर को कहता है कि दोज़ख़ में डालूँगा ।

फ़र्क़ की वजह— इल्म और अमल

इससे मालूम हुआ कि मुसलमान को काफ़िर से अलग करनेवाली सिर्फ़ दो चीज़े हैं, एक 'इल्म' और दूसरी 'अमल' । यानी पहले तो उसे यह जानना चाहिए कि उसका मालिक कौन है ? उसके हुक्म क्या हैं ? उसकी मरज़ी पर चलने का तरीक़ा क्या है ? किन कामों से वह ख़ुश होता है और किन कामों से नाराज़ होता है ? फिर जब ये बातें मालूम हो जाएँ तो दूसरी बात यह है कि आदमी अपने आपको मालिक का ग़ुलाम बना दे । जो मालिक की मरज़ी हो उसपर चले और जो अपनी मरज़ी हो उसको छोड़ दे । अगर उसका दिल एक काम को चाहे और मालिक का हुक्म उसके ख़िलाफ़ हो तो अपने दिल की बात न माने और मालिक की बात मान ले । अगर एक काम उसको अच्छा मालूम होता है और मालिक कहे कि वह बुरा है, तो उसे बुरा ही समझे और अगर दूसरा काम उसे बुरा मालूम होता है और मालिक कहे कि वह अच्छा काम है, तो उसे अच्छा ही समझे । इसी तरह अगर एक काम में उसे नुक़सान नज़र आता हो और मालिक का हुक्म हो कि उसे किया जाए, तो चाहे उसमें जान और माल का कितना ही नुक़सान हो, वह उसको ज़रूर करके ही छोड़े ।

अगर दूसरे काम में उसको फ़ायदा दिखाई देता हो और मालिक का हुक्म हो कि उसे न किया जाए, तो फिर चाहे दुनिया भर की दौलत ही उस काम में क्यों न मिलती हो, वह उस काम को हरगिज़ न करे।

यह 'इल्म' और यह 'अमल' है जिसकी वजह से मुसलमान ख़ुदा का प्यारा बन्दा होता है, उसपर ख़ुदा की रहमत उतरती है और ख़ुदा उसको इज़्ज़त देता है। काफ़िर यह इल्म नहीं रखता और इल्म न होने की वजह से उसका अमल भी यह नहीं होता; इसलिए वह ख़ुदा का जाहिल और नाफ़रमान बन्दा होता है और ख़ुदा उसको अपनी रहमत से महरूम कर देता है।

अब ख़ुद ही इनसाफ़ से काम लेकर सोचिए कि जो व्यक्ति अपने आपको मुसलमान कहता हो, मगर वैसा ही जाहिल हो जैसाकि एक काफ़िर होता है और वैसा ही नाफ़रमान हो जैसा कि एक काफ़िर होता है, तो सिर्फ़ नाम और लिबास व खाने-पीने के फ़र्क़ की वजह से वह काफ़िर के मुक़ाबले में किस तरह अफ़ज़ल (श्रेष्ठ) हो सकता है और किस बिना पर दुनिया और आख़िरत में ख़ुदा की रहमत का हक़दार हो सकता है ? इस्लाम किसी नस्ल या ख़ानदान या बिरादरी का नाम नहीं है कि बाप से बेटे को और बेटे से पोते को आप ही आप मिल जाए। यहाँ यह बात नहीं है कि ब्राह्मण का लड़का चाहे कैसा ही जाहिल हो और कैसे ही बुरे काम करे, मगर वह ऊँचा ही होगा; क्योंकि ब्राह्मण के यहाँ पैदा हुआ है और ऊँची ज़ात का है, और चमार का लड़का चाहे इल्म और अमल में हर तरह से उससे बढ़कर हो, मगर वह नीचा ही रहेगा; क्योंकि चमार के घर पैदा हुआ है और शूद्र है। यहाँ तो ख़ुदा ने अपनी किताब में साफ़ कह दिया है कि—

إِنَّ أَكْرَمَكُمْ عِنْدَ اللّٰهِ أَتْقٰكُمْ ○

जो ख़ुदा को ज़्यादा पहचानता है और उसकी ज़्यादा फ़रमाँ-बरदारी करता है, वही ख़ुदा की नज़र में ज़्यादा इज़्ज़तवाला है।

(क़ुरआन, 49:13)

हज़रत इबराहीम (अलै०) एक बुतपरस्त के घर पैदा हुए, मगर उन्होंने ख़ुदा को पहचाना और उसकी फ़रमाँबरदारी की, इसलिए ख़ुदा ने उनको

सारी दुनिया का इमाम बना दिया। हज़रत नूह (अलै०) का लड़का एक पैग़म्बर के घर पैदा हुआ मगर उसने ख़ुदा को न पहचाना और उसकी नाफ़रमानी की; इसलिए ख़ुदा ने उसके ख़ानदान की कुछ परवाह न की और उसे ऐसा अज़ाब दिया जिससे दुनिया सबक़ लेती है। बस ख़ूब अच्छी तरह समझ लीजिए कि ख़ुदा की नज़र में इनसान और इनसान में जो कुछ भी फ़र्क़ है वह इल्म और अमल के कारण है। दुनिया में भी और आख़िरत में भी, उसकी रहमत सिर्फ़ उन्हीं के लिए है जो उसको पहचानते हैं, उसके बताए हुए रास्ते को जानते हैं और उसकी फ़रमाँबरदारी करते हैं। जिन लोगों में यह ख़ूबी नहीं है उनके नाम चाहे अब्दुल्लाह और अब्दुर्रहमान हों या दीनदयाल या करतार सिंह, ख़ुदा की नज़र में इन सब में कोई फ़र्क़ नहीं और उनको उसकी रहमत से कोई हक़ नहीं पहुँचता।

आज मुसलमान बेइज़्ज़त क्यों ?

भाइयो ! आप अपने आपको मुसलमान कहते हैं और आपका ईमान है कि मुसलमान पर ख़ुदा की रहमत होती है। मगर ज़रा आँखें खोलकर देखिए, क्या ख़ुदा की रहमत आप पर नाज़िल हो रही है ? आख़िरत में जो कुछ होगा वह तो आप बाद में देखेंगे, मगर इस दुनिया में जो आपका हाल है उसपर नज़र डालिए। आप अब भी करोड़ों की तादाद में हैं, इतनी बड़ी तादाद अगर इस्लाम की रूह और ईमान की क़ुव्वत रखती होती तो आप यूँ बेबस और बेवज़न न होते, बल्कि अल्लाह ने आपके हाथ में हुकूमत सौंपी होती। आपका सिर जो ख़ुदा के सिवा किसी के आगे न झुकता था, अब इनसानों के आगे झुक रहा है। आपकी इज़्ज़त, जिसपर हाथ डालने की कोई हिम्मत न कर सकता था, आज मिट्टी में मिल रही है। आपका हाथ जो हमेशा ऊँचा ही रहता था, अब वह नीचा होता है और इस्लाम के दुश्मनों के आगे फैलता है। जिहालत, ग़रीबी और क़र्ज़दारी ने हर जगह आपको ज़लील व रुसवा कर रखा है। क्या यह ख़ुदा की रहमत है ? अगर यह रहमत नहीं है, बल्कि खुला हुआ ग़ज़ब और प्रकोप है, तो कैसी अजीब बात है कि मुसलमान और उसपर ख़ुदा का ग़ज़ब नाज़िल हो! मुसलमान और ज़लील हो! मुसलमान और ग़ुलाम हो! यह तो ऐसी नामुमकिन बात है जैसे, कोई चीज़ सफ़ेद भी हो और काली भी।

जब मुसलमान ख़ुदा का महबूब और प्रिय है तो ख़ुदा का महबूब दुनिया में ज़लील और बेइज़्ज़त कैसे हो सकता है ? अल्लाह की पनाह ! क्या आपका ख़ुदा ज़ालिम है कि आप तो उसका हक़ पहचानें और उसकी फ़रमाँबरदारी करें और वह नाफ़रमानों को आप पर हाकिम बना दे और आपको फ़रमाँबरदारी के बदले में सज़ा दे ? अगर आपका ईमान है कि ख़ुदा ज़ालिम नहीं है और अगर आप यक़ीन रखते हैं कि ख़ुदा की फ़रमाँबरदारी का बदला ज़िल्लत से नहीं मिल सकता, तो फिर आपको मानना पड़ेगा कि मुसलमान होने का दावा जो आप करते हैं उसी में कोई ग़लती है । आपका नाम सरकारी काग़ज़ों में तो ज़रूर मुसलमान लिखा जाता है, मगर ख़ुदा के यहाँ किसी सरकार के दफ़्तर की सनद पर फ़ैसला नहीं होता । ख़ुदा अपना दफ़्तर अलग रखता है । वहाँ तलाश कीजिए कि आपका नाम फ़रमाँबरदारों में लिखा हुआ है या नाफ़रमाँनों में ?

ख़ुदा ने आपके पास किताब भेजी ताकि आप उस किताब को पढ़कर अपने मालिक को पहचानें और उसकी फ़रमाँबरदारी का तरीक़ा मालूम करें । क्या आपने कभी यह मालूम करने की कोशिश की कि इस किताब में क्या लिखा है ? ख़ुदा ने अपने नबी को आपके पास भेजा ताकि वह आपको मुसलमान बनने का तरीक़ा सिखाए । क्या आपने कभी यह मालूम करने की कोशिश की कि उसके नबी (सल्ल०) ने क्या सिखाया है ? ख़ुदा ने आपको दुनिया और आख़िरत में इज़्ज़त हासिल करने का तरीक़ा बताया । क्या आप उस तरीक़े पर चलते हैं ? ख़ुदा ने खोलकर बताया कि कौन से काम हैं जिनसे इनसान दुनिया और आख़िरत में बेइज़्ज़त होता है । क्या आप ऐसे कामों से बचते हैं ? बताइए आपके पास इसका क्या जवाब है ? अगर आप मानते हैं कि न तो आपने ख़ुदा की किताब और उसके नबी की ज़िन्दगी से इल्म हासिल किया और न उसके बताए हुए तरीक़े की पैरवी की, तो आप मुसलमान हुए कब कि आपको इसका बदला मिले ? जैसे आप मुसलमान हैं वैसा ही बदला आपको मिल रहा है और वैसा ही बदला आख़िरत में भी देख लोगे ।

मैं पहले बयान कर चुका हूँ कि मुसलमान और काफ़िर में इल्म और अमल के सिवा कोई फ़र्क़ नहीं है । अगर किसी आदमी का इल्म और

अमल वैसा ही है जैसा किसी काफ़िर का है और वह अपने आपको मुसलमान कहता है तो वह बिलकुल झूठ कहता है । काफ़िर कुरआन को नहीं पढ़ता और वह नहीं जानता कि इसमें क्या लिखा है । यही हाल अगर मुसलमान का भी हो तो वह मुसलमान क्यों कहलाए ? काफ़िर नहीं जानता कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) की क्या तालीम है और आपने ख़ुदा तक पहुँचने का सीधा रास्ता क्या बताया है । अगर मुसलमान भी उसी की तरह नावाक़िफ़ हो तो वह मुसलमान कैसे हुआ ? काफ़िर ख़ुदा की मरज़ी पर चलने के बजाए अपनी मरज़ी पर चलता है । मुसलमान भी अगर उसी की तरह अपनी मरज़ी पर चलनेवाला और आज़ाद हो, उसी की तरह अपने निज़ी ख़यालात और अपनी राय पर चलनेवाला हो, उसी की तरह ख़ुदा से बेपरवाह और अपनी ख़्वाहिश का बन्दा हो तो उसे अपने आपको 'मुसलमान' (ख़ुदा का फ़रमाँबरदार) कहने का क्या हक़ है ? काफ़िर हलाल व हराम में फ़र्क़ नहीं करता और जिस काम में अपने नज़दीक फ़ायदा या लज़्ज़त देखता है उसको अपना लेता है, चाहे ख़ुदा के नज़दीक वह हलाल हो या हराम । यही रवैया अगर मुसलमान का हो तो उसमें और काफ़िर में क्या फ़र्क़ हुआ ? ग़रज़ यह है कि जब मुसलमान भी इस्लाम के इल्म से उतना ही कोरा हो, जितना काफ़िर होता है और जब मुसलमान भी वही सब कुछ करे जो काफ़िर करता है तो उसको काफ़िर के मुक़ाबले में क्यों बड़ाई हासिल हो और उसका हश्र भी काफ़िर जैसा क्यों न हो ? यह ऐसी बात है जिसपर ठण्डे दिल से हम सबको ग़ौर करना चाहिए ।

सोचने की बात

मेरे प्यारे भाइयो ! कहीं यह न समझ लेना कि मैं मुसलमानों को काफ़िर बनाने चला हूँ । अल्लाह इससे पनाह में रखे ! नहीं, मेरा यह मक़सद हरगिज़ नहीं है । मैं ख़ुद भी सोचता हूँ और चाहता हूँ कि हममें से हर आदमी अपनी-अपनी जगह सोचे कि हम आख़िर ख़ुदा की रहमत से क्यों महरूम हो गए हैं ? हम पर हर तरफ़ से क्यों मुसीबतें नाज़िल हो रही हैं ? जिनको हम काफ़िर यानी ख़ुदा के नाफ़रमान बन्दे कहते हैं वे हमपर हर जगह ग़ालिब क्यों हैं ? और हम जो फ़रमाँबरदार होने का दावा करते हैं, हर जगह दबे हुए क्यों हैं ? इसकी वजह पर मैंने जितना ज़्यादा ग़ौर

किया, उतना ही मुझे यक़ीन होता चला गया कि हममें और काफ़िरों में बस नाम का ही फ़र्क़ रह गया है, वरना हम भी ख़ुदा से ग़फ़लत और उससे बेख़ौफ़ी और उसकी नाफ़रमानी में उनसे कुछ कम नहीं हैं । थोड़ा-सा फ़र्क़ हममें और उनमें ज़रूर है, मगर इसकी वजह से हम किसी अच्छे बदले के हक़दार नहीं हैं, बल्कि सज़ा के हक़दार हैं । हम जानते हैं कि कुरआन ख़ुदा की किताब है और फिर उसके साथ वह बरताव करते हैं जो काफ़िर करता है, हम जानते हैं कि मुहम्मद (सल्ल०) अल्लाह के नबी हैं और फिर उनकी पैरवी से इस तरह भागते हैं जिस तरह काफ़िर भागता है, हमको मालूम है कि झूठे पर अल्लाह ने लानत की है, रिश्वत खाने और खिलानेवाले को जहन्नम का यक़ीन दिलाया है, सूद खाने और खिलानेवाले को बहुत बड़ा अपराधी ठहराया है, ग़ीबत (पीठ पीछे बुराई) को अपने भाई का गोश्त खाने के बराबर बताया है, गाली, बेहयाई और बदकारी पर कड़ी सज़ा की धमकी दी है । मगर यह जानने के बाद भी हम बेदीनों की तरह यह सब काम आज़ादी के साथ करते हैं, गोया हमें ख़ुदा का कोई ख़ौफ़ ही नहीं । यही वजह है कि हम जो काफ़िरों के मुक़ाबले में थोड़े बहुत मुसलमान बने हुए नज़र आते हैं, इसपर हमें इनाम नहीं मिलता; बल्कि सज़ा दी जाती है । क़ाफ़िरों का हमपर हुकूमत करना, हर जगह हमारा नुक़सान उठाना, इसी जुर्म की सज़ा है कि हमें इस्लाम की नेमत दी गई थी और फिर हमने उसकी क़द्र न की ।

प्यारे भाइयो ! आज के ख़ुतबे में मैंने जो कुछ कहा है यह इसलिए नहीं कि आपको मलामत करूँ । मैं मलामत करने नहीं उठा हूँ । मेरा मक़सद यह है कि जो कुछ खो गया है उसको फिर से हासिल करने की कुछ फ़िक्र की जाए । खोए हुए को पाने की फ़िक्र उसी वक़्त होती है जब इनसान को मालूम हो कि उसके पास से क्या चीज़ खो गई है और वह कैसी क़ीमती चीज़ है । इसी लिए मैं आपको चौंकाने की कोशिश करता हूँ । अगर आपको होश आ जाए और आप समझ लें कि हक़ीक़त में बहुत क़ीमती चीज़ आपके पास थी, तो आप फिर से उसको हासिल करने की फ़िक्र करेंगे ।

इल्म हासिल करने की फ़िक्र

मैंने पिछले ख़ुतबे में आपसे कहा था कि मुसलमान को मुसलमान होने के लिए सबसे पहले जिस चीज़ की ज़रूरत है, वह इस्लाम का 'इल्म' है । हर मुसलमान को यह मालूम होना चाहिए कि क़ुरआन की तालीम क्या है, रसूले पाक (सल्ल०) का तरीक़ा क्या है, इस्लाम किसको कहते हैं और कुफ़्र व इस्लाम में असली फ़र्क़ किन बातों की वजह से है ? इस इल्म के बग़ैर कोई आदमी मुसलमान नहीं हो सकता । मगर अफ़सोस है कि आप इस इल्म को हासिल करने की फ़िक्र नहीं करते । इससे मालूम होता है कि अभी तक आपको एहसास नहीं हुआ कि आप कितनी बड़ी नेमत से महरूम हैं । मेरे भाइयो ! माँ अपने बच्चे को दूध उस वक़्त तक नहीं देती जब तक कि वह रोकर माँगता नहीं । प्यासे को जब प्यास लगती है तो वह ख़ुद पानी ढूँढ़ता है और ख़ुदा उसके लिए पानी भी पैदा कर देता है । जब आपको ख़ुद ही प्यास न हो तो पानी से भरा हुआ कुआँ भी आपके पास आ जाए तो बेकार है । पहले आपको ख़ुद समझना चाहिए कि दीन से नावाक़िफ़ रहने में आपका कितना बड़ा नुक़सान है । ख़ुदा की किताब आपके पास मौजूद है, मगर आप नहीं जानते कि उसमें क्या लिखा है । इससे ज़्यादा नुक़सान की बात और क्या हो सकती है! नमाज़ आप पढ़ते हैं मगर आपको नहीं मालूम कि उस नमाज़ में आप अपने ख़ुदा से क्या अर्ज़ करते हैं । इससे बढ़कर और क्या नुक़सान हो सकता है! कलिमा, जिसके ज़रिए से आप इस्लाम में दाख़िल होते हैं उसके मानी तक आपको मालूम नहीं । आप नहीं जानते कि इस कलिमे को पढ़ने के साथ ही आपपर क्या ज़िम्मेदारियाँ आ पड़ती हैं । एक मुसलमान के लिए क्या इससे बढ़कर कोई नुक़सान हो सकता है ? खेती के जल जाने का नुक़सान आपको मालूम है, रोज़गार न मिलने का नुक़सान आपको मालूम है, अपने माल के नष्ट होने का नुक़सान आपको मालूम है, मगर इस्लाम से नावाक़िफ़ होने का नुक़सान आपको मालूम नहीं । जब आपको इस नुक़सान का एहसास होगा तो आप ख़ुद आकर कहेंगे कि हमें इस नुक़सान से बचाओ और जब आप ख़ुद कहेंगे तो इनशाअल्लाह आपको इस नुक़सान से बचाने का भी इनतिज़ाम हो जाएगा ।

सोचने की बातें

कुरआन के साथ हमारा सुलूक

मुसलमान भाइयो ! दुनिया में इस समय मुसलमान ही वह ख़ुशक़िस्मत लोग हैं, जिनके पास अल्लाह का कलाम बिलकुल महफ़ूज़, हर तरह की काट-छाँट और अदल-बदल से पाक और ठीक-ठीक उन्हीं शब्दों में मौजूद है, जिन शब्दों में वह अल्लाह के सच्चे रसूल (सल्ल०) पर उतरा था और दुनिया में इस समय मुसलमान ही वह बदक़िस्मत लोग हैं जो अपने पास अल्लाह का कलाम रखते हैं और फिर भी उसकी बरकतों और अपार नेमतों से महरूम हैं । क़ुरआन इनसानों के पास इसलिए भेजा गया था कि उसको पढ़ें, समझें, उसपर चलें और उसको लेकर ख़ुदा की ज़मीन पर ख़ुदा के क़ानून की हुकूमत क़ायम कर दें । वह अपनी पैरवी करनेवालों को इज़्ज़त और ताक़त देने आया था । वह उन्हें ज़मीन पर ख़ुदा का असली ख़लीफ़ा बनाने आया था, और इतिहास गवाह है कि जब उन्होंने उसकी हिदायत पर अमल किया तो उसने उनको दुनिया का इमाम और पेशवा बनाकर भी दिखा दिया । मगर अब उनके यहाँ उसका प्रयोग सिवाय इसके और कुछ नहीं रहा कि उसको घर में रखकर जिन्न और भूत भगाएँ, उसकी आयतों को लिखकर गले में बाँधें और घोलकर पिएँ और पिलाएँ, सिर्फ़ सवाब के लिए बेसमझे-बूझे पढ़ लिया करें । अब यह उससे अपनी ज़िंदगी के मामलों में हिदायत नहीं माँगते । यह उससे नहीं पूछते कि हमारे अक़ीदे क्या होने चाहिएँ, हमारे अमल क्या होने चाहिएँ, हमारे अख़लाक़ कैसे होने चाहिएँ ? हम लेन-देन किस तरह करें ? दोस्ती या दुश्मनी में किस क़ानून की पाबन्दी करें ? ख़ुदा के बन्दों के और ख़ुद अपने नफ़्स के हक़ हमपर क्या हैं और उन्हें हम किस तरह अदा करें ? हमारे लिए हक़ क्या है और बातिल क्या ? इताअत व फ़रमाँबरदारी हमें किसकी करनी चाहिए और नाफ़रमानी किसकी ? ताल्लुक़ किससे रखना चाहिए और किससे न रखना चाहिए ? हमारा दोस्त कौन है और दुश्मन कौन है ? हमारे लिए

इज़्ज़त, सलामती और नफ़ा किस चीज़ में है और ज़िल्लत, नामुरादी और नुक़सान किस चीज़ में ? ये सारी बातें अब मुसलमानों ने क़ुरआन से पूछनी छोड़ दी हैं । अब वे ख़ुदा से फिरे हुए दुनियापरस्तों से, काफ़िरों और मुशरिकों से, गुमराह और ख़ुदग़रज़ लोगों से और ख़ुद अपने नफ़्स के शैतान से इन बातों को पूछते हैं और इन्हीं के कहे पर चलते हैं । इसलिए ख़ुदा को छोड़कर दूसरों के हुक्म पर चलने का जो अंजाम होना चाहिए वही उनका हुआ और उसी को वे आज हर जगह, हर मुल्क में बुरी तरह भुगत रहे हैं । क़ुरआन तो भलाइयों का सरचश्मा है, जितनी और जैसी भलाई आप उससे माँगेंगे वह आपको देगा । आप उससे महज़ जिन्न-भूत भगाना और खांसी-बुख़ार का इलाज और मुक़दमें की कामियाबी और नौकरी के हुसूल और ऐसी ही छोटी-छोटी, तुच्छ और बेहक़ीक़त चीज़ें माँगते हैं तो यही आपको मिलेगी । अगर दुनिया की बादशाही और रूए ज़मीन की हुकूमत माँगोगे तो वह भी मिलेगी और अगर अर्शे इलाही के क़रीब पहुँचना चाहोगे तो यह आपको वहाँ भी पहुँचा देगा । वह आपके हौसले की बात है कि समुद्र से पानी की दो बूंद माँगते हो, वरना समुद्र तो दरिया बख़्शने के लिए भी तैयार है ।

भाइयो ! जो मज़ाक़ और ज़ुल्म हमारे मुसलमान भाई अल्लाह की इस किताब के साथ करते हैं वह इतना बचकाना है कि अगर ये ख़ुद किसी दूसरे मामले में किसी दूसरे आदमी को ऐसी हरकतें करते देखें तो उसकी हँसी उड़ाएँ, बल्कि उसको पागल ठहराएँ । बताइए अगर कोई आदमी हकीम से नुसख़ा लिखवाकर लाए और उसे कपड़े में लपेटकर गले में बाँध ले या उसे पानी में घोलकर पी जाए तो उसे आप क्या कहेंगे ? क्या आपको उसपर हँसी न आएगी और आप उसे बेवकूफ़ न समझेंगे । मगर सबसे बड़े हकीम ने आपकी बीमारियों के लिए शिफ़ा और रहमत का जो बेमिसाल नुसख़ा लिखकर दिया है, उसके साथ आपकी आँखों के सामने रात-दिन यही सुलूक हो रहा है और किसी को इसपर हँसी नहीं आती, कोई नहीं सोचता कि नुसख़ा गले में लटकाने और घोल कर पीने की चीज़ नहीं बल्कि इसलिए होता है कि उसकी हिदायत के मुताबिक़ दवा इस्तेमाल की जाए ।

कुरआन को समझना और उसपर अमल करना लाज़िमी है

बताइए अगर कोई आदमी बीमार हो और दवाइयों की कोई किताब लेकर पढ़ने बैठ जाए और यह ख़याल करे कि सिर्फ़ इस किताब को पढ़ लेने से बीमारी दूर हो जाएगी तो आप उसे क्या कहेंगे ? क्या आप न कहेंगे कि भेजो इसे पागलख़ाने में, इसका दिमाग़ ख़राब हो गया है । मगर हर मर्ज़ से छुटकारा दिलानेवाले ने जो किताब आपके मरज़ों का इलाज करने के लिए भेजी है, उसके साथ आपका यही बरताव है । आप उसको पढ़ते हैं और यह ख़याल करते हैं कि बस उसके पढ़ लेने ही से सारी बीमारियाँ दूर हो जाएँगी । उसकी हिदायत पर अमल करने की ज़रूरत नहीं, न उन चीज़ों से परहेज़ करने की ज़रूरत है, जिनको वह नुक़सानदेह बता रही है । फिर आप ख़ुद अपने ऊपर भी वही हुक्म क्यों नहीं लगाते, जो उस आदमी पर लगाते हैं जो बीमारी को दूर करने के लिए सिर्फ़ दवाओं की किताब पढ़ लेने को काफ़ी समझता है ?

आपके पास अगर कोई ख़त किसी ऐसी ज़बान में आता है जिसे आप न जानते हों तो आप दौड़े हुए जाते हैं कि इस ज़बान के जाननेवाले से उसका मतलब पूछें । जब तक आप उसका मतलब नहीं जान लेते आपको चैन नहीं आता । यह मामूली कारोबार के ख़तों के साथ आपका बरताव है जिनमें ज़्यादा-से-ज़्यादा चार पैसों का फ़ायदा हो जाता है । मगर दुनिया के मालिक का जो ख़त आपके पास आया हुआ है और जिसमें आपके लिए दीन व दुनिया के तमाम फ़ायदे हैं, उसे आप अपने पास यूँ ही रख छोड़ते हैं । उसका मतलब समझने के लिए कोई बेचैनी आपमें पैदा नहीं होती, क्या यह हैरत और ताज्जुब की बात नहीं ?

अल्लाह की किताब पर ज़ुल्म का नतीजा

मैं ये बातें हँसी-दिल्लगी के लिए नहीं कर रहा हूँ । आप इन बातों पर ग़ौर करेंगे तो आपका दिल गवाही देगा कि दुनिया में सबसे बढ़कर ज़ुल्म अल्लाह की इस पाक किताब के साथ हो रहा है और यह ज़ुल्म करनेवाले वही लोग हैं, जो कहते हैं कि हम इस किताब पर ईमान रखते हैं और इसपर जान क़ुरबान करने के लिए तैयार हैं । बेशक वे ईमान रखते

हैं और इसे जान से ज़्यादा प्यारी रखते हैं, मगर अफ़सोस यह है कि वही इसपर सबसे ज़्यादा ज़ुल्म करते हैं और अल्लाह की किताब पर ज़ुल्म करने का जो अंजाम है वह ज़ाहिर है । ख़ूब समझ लीजिए, अल्लाह का कलाम इनसान के पास इसलिए नहीं आता कि वह बदनसीबी और बदहाली व मुसीबत में पड़े ।

طٰهٰ مَآ اَنْزَلْنَا عَلَيْكَ الْقُرْاٰنَ لِتَشْقٰىٓ ۝

ता०हा० । हमने यह क़ुरआन तुमपर इसलिए नहीं उतारा कि तुम मुसीबत में पड़ जाओ । (क़ुरआन, 20:1,2)

यह ख़ुशनसीबी और ख़ुशहाली का सरचश्मा है, बदबख़्ती का ज़रिया नहीं है । यह क़तई नामुमकिन है कि कोई क़ौम ख़ुदा के कलाम पर चले और फिर दुनिया में बेइज़्ज़त हो, दूसरों की महकूम हो, पाँव तले रौंदी और जूतियों से ठुकराई जाए, उसके गले में ग़ुलामी का पट्टा हो और ग़ैरों के हाथ में उसकी बागडोर हो और वह उसको इस तरह हाँके जैसे जानवर हाँके जाते हैं । यह अंजाम उसका सिर्फ़ उसी वक़्त होता है, जब वह अल्लाह के कलाम पर ज़ुल्म करती है । बनी इसराईल का अंजाम आपके सामने है । उनके पास तौरात और इनजील भेजी गई थीं और कहा गया था :

وَلَوْ اَنَّهُمْ اَقَامُوا التَّوْرٰىةَ وَالْاِنْجِيْلَ وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْهِمْ مِّنْ رَّبِّهِمْ لَاَكَلُوْا مِنْ فَوْقِهِمْ وَمِنْ تَحْتِ اَرْجُلِهِمْ ؕ

अगर वे तौरात और इनजील और उन किताबों की पैरवी पर क़ायम रहते जो उनके पास भेजी गई थीं तो उनपर आसमान से रोज़ी बरसती और ज़मीन से रोज़ी उबलती । (क़ुरआन, 5:66)

मगर उन्होंने अल्लाह की किताबों पर ज़ुल्म किया और उसका नतीजा यह देखा कि : ضُرِبَتْ عَلَيْهِمُ الذِّلَّةُ وَالْمَسْكَنَةُ وَبَآءُوْ بِغَضَبٍ مِّنَ اللّٰهِ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ كَانُوْا يَكْفُرُوْنَ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ وَيَقْتُلُوْنَ النَّبِيّٖنَ بِغَيْرِ الْحَقِّ ؕ ذٰلِكَ بِمَا عَصَوْا وَّكَانُوْا يَعْتَدُوْنَ ۝

उनपर ज़िल्लत और ग़रीबी की मार पड़ी और वह ख़ुदा के

इस्लाम की असली कसौटी

'मुसलमान भाइयो! अल्लाह तआला अपनी किताब पाक में फ़रमाता है—

قُلْ إِنَّ صَلَاتِي وَنُسُكِي وَمَحْيَايَ وَمَمَاتِي لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِينَ ۝ لَا شَرِيكَ لَهُۥ وَبِذٰلِكَ أُمِرْتُ وَأَنَا أَوَّلُ الْمُسْلِمِينَ ۝

यानी, (ऐ मुहम्मद सल्ल०) कहो, मेरी नमाज़ और मेरी इबादत के सारे तरीक़े और मेरा जीना और मेरा मरना सब कुछ अल्लाह के लिए है जो सारी कायनात का मालिक है, उसका कोई शरीक नहीं और इसी का मुझे हुक्म दिया गया है और सबसे पहले मैं उसकी फ़रमाँबरदारी में सिर झुकानेवाला हूँ।

(क़ुरआन, 6:162–163)

इस आयत की तशरीह नबी (सल्ल०) के इस इरशाद से होती है—

مَنْ أَحَبَّ لِلّٰهِ وَأَبْغَضَ لِلّٰهِ وَأَعْطٰى لِلّٰهِ وَمَنَعَ لِلّٰهِ فَقَدِ اسْتَكْمَلَ الْإِيمَانَ.

जिसने किसी से दोस्ती व मुहब्बत की तो अल्लाह के लिए, और दुश्मनी की तो अल्लाह के लिए, और किसी को दिया तो अल्लाह के लिए और किसी से रोका तो अल्लाह के लिए, उसने अपने ईमान को पूरा कर लिया, यानी वह पूरा मोमिन हो गया।

अब जो आयत मैंने आपके सामने पेश की है, उससे मालूम होता है कि इस्लाम का तक़ाज़ा यह है कि इनसान अपनी बन्दगी और अपने जीने और मरने को सिर्फ़ अल्लाह के लिए ख़ालिस कर ले और अल्लाह के सिवा किसी को इसमें शरीक न करे यानी न उसकी बन्दगी अल्लाह के सिवा किसी और के लिए हो और न उसका जीना और मरना।

इसकी जो तशरीह नबी (सल्ल०) की ज़बान से मैंने आपको सुनाई है,

उससे मालूम होता है कि आदमी की मुहब्बत और दुशमनी और अपनी दुनियवी ज़िन्दगी के मामलों में उसका लेन-देन सिर्फ़ ख़ुदा के लिए होना ईमान का ऐन तक़ाज़ा है। इसके बग़ैर ईमान ही पूरा नहीं हुआ, ऊँचे-ऊँचे रुतबों का दरवाज़ा खुल सकना तो दूर की बात है। जितनी कमी इस मामले में होगी, उतनी ही कमी आदमी के ईमान में होगी और जब इस हैसियत से आदमी पूरे तौर पर अल्लाह का हो जाए तब कहीं उसका ईमान मुकम्मल होता है।

कुछ लोग यह समझते हैं कि इस क़िस्म की चीज़ें सिर्फ़ ऊँचे-ऊँचे रुतबों का दरवाज़ा खोलती हैं, वरना ईमान और इस्लाम के लिए इनसान के अन्दर यह कैफ़ियत पैदा होना शर्त नहीं है। यानी दूसरे लफ़्ज़ों में इस कैफ़ियत के बिना भी इनसान मोमिन व मुसलिम हो सकता है, मगर यह एक ग़लतफ़हमी है और इस ग़लतफ़हमी के पैदा होने की वजह यह है कि आम तौर पर लोग फ़िक़्ही और क़ानूनी इस्लाम और उस हक़ीक़ी इस्लाम में जो अल्लाह के यहाँ मोतबर है, फ़र्क़ नहीं करते।

क़ानूनी और हक़ीक़ी इस्लाम का फ़र्क़

क़ानूनी इस्लाम

फ़िक़्ही और क़ानूनी इस्लाम में आदमी के दिल का हाल नहीं देखा जाता और न ही देखा जा सकता, बल्कि सिर्फ़ उसके ज़बानी इक़रार को और इस चीज़ को देखा जाता है कि वह अपने अन्दर उन ज़रूरी निशानियों को ज़ाहिर करता है या नहीं, जो ज़बानी इक़रार की पुख़्तगी के लिए ज़रूरी हैं। अगर किसी शख़्स ने ज़बान से अल्लाह और रसूल और क़ुरआन और आख़िरत और ईमान की दूसरी बातों को मानने का इक़रार कर लिया और इसके बाद ज़रूरी शर्तें भी पूरी कर दीं, जिनसे उसके मानने का सबूत मिलता है, तो वह इस्लाम के दायरे में शामिल कर लिया जाएगा और सारे मामले उसके साथ मुसलमान समझकर किए जाएँगे, लेकिन यह चीज़ सिर्फ़ दुनिया के लिए है और दुनियवी हैसियत से वह क़ानूनी और तमद्दुनी बुनियाद जुटाती है जिसपर मुसलिम सोसाइटी की तामीर की गई है। इसका हासिल इसके सिवा कुछ नहीं है कि ऐसे इक़रार के साथ जितने लोग मुसलिम

सोसाइटी में दाख़िल हों, वे सब मुसलमान माने जाएँ, इनमें से किसी को काफ़िर न ठहराया जाए, इनको एक-दूसरे पर शरई, क़ानूनी, अख़लाक़ी और समाजी हक़ हासिल हों, उनके बीच शादी-ब्याह के ताल्लुक़ात क़ायम हों, जायदाद तक़सीम हो और दूसरे तमद्दुनी रवाबित वुजूद में आएँ।

हक़ीक़ी इस्लाम

लेकिन आख़िरत में इनसान की नजात और उसका मुसलिम व मोमिन क़रार दिया जाना और अल्लाह के मक़बूल बन्दों में गिना जाना इस क़ानूनी इक़रार पर मुनहसर नहीं है, बल्कि वहाँ असल चीज़ आदमी का क़ल्बी इक़रार, उसके दिल का झुकाव और उसका राज़ी-ख़ुशी अपने आपको पूरे तौर पर ख़ुदा के हवाले कर देना है। दुनिया में जो ज़बानी इक़रार किया जाता है, वह तो सिर्फ़ शरई क़ाज़ी के लिए और आम इनसानों और मुसलमानों के लिए है, क्योंकि वे सिर्फ़ ज़ाहिर ही को देख सकते हैं। मगर अल्लाह आदमी के दिल को और उसके बातिन को देखता है और उसके ईमान को नापता है। उसके यहाँ आदमी को जिस हैसियत से जाँचा जाएगा, वह यह है कि क्या उसका जीना और मरना और उसकी वफ़ादारियाँ और उसकी फ़रमाँबरदारी व बन्दगी और उसकी ज़िन्दगी का पूरा कारनामा अल्लाह के लिए था या किसी और के लिए? अगर अल्लाह के लिए था तो वह मुसलिम और मोमिन क़रार पाएगा, और अगर किसी और के लिए था तो न वह मुसलिम होगा, न मोमिन। इस हैसियत से जो जितना कच्चा निकलेगा, उतना ही उसका ईमान और इस्लाम कच्चा होगा, भले ही दुनिया में उसकी गिनती बड़े से बड़े मुसलमानों में होती रही हो और उसे कितने ही बड़े दर्जे दिए गए हों। अल्लाह के यहाँ क़द्र सिर्फ़ इस चीज़ की है कि जो कुछ उसने आपको दिया है, वह सब कुछ आपने उसकी राह में लगा दिया या नहीं। अगर आपने ऐसा कर दिया तो आपको वही हक़ दिया जाएगा जो वफ़ादारों और बन्दगी के हक़ अदा करनेवालों को दिया जाता है। और अगर आपने किसी चीज़ को अल्लाह की बन्दगी से अलग करके रखा तो आपका यह इक़रार कि आप मुसलिम हुए यानी यह कि आपने अपने आपको बिलकुल ख़ुदा के हवाले कर दिया, सिर्फ़ एक झूठा इक़रार होगा जिससे दुनिया के लोग धोखा खा सकते हैं, जिससे धोखा खाकर

मुसलिम सोसायटी आपको अपने अन्दर जगह दे सकती है, जिससे दुनिया में आपको मुसलमानों के से सारे हुक़ूक़ मिल सकते हैं, लेकिन इससे धोखा खाकर अल्लाह अपने यहाँ आपको वफ़ादारों में जगह नहीं दे सकता।

यह क़ानूनी और हक़ीक़ी इस्लाम का फ़र्क़ जो मैंने आपके सामने बयान किया है, अगर आप इसपर ग़ौर करें तो आपको मालूम होगा कि इसके नतीजे सिर्फ़ आख़िरत ही में अलग-अलग नहीं होंगे, बल्कि दुनिया में भी एक बड़ी हद तक अलग-अलग हैं। दुनिया में जो मुसलमान पाए गए हैं या आज पाए जाते हैं, इन सबको दो क़िस्मों में बाँटा जा सकता है—

मुसलमानों की दो क़िस्में

(1) जुज़वी (आंशिक) मुसलमान

एक क़िस्म के मुसलमान वे जो अल्लाह और उसके रसूल (सल्ल०) का इक़रार करके इस्लाम को अपना मज़हब समझकर मान लें, मगर अपने इस मज़हब को अपनी कुल ज़िन्दगी का सिर्फ़ एक हिस्सा और एक शोबा ही बनाकर रखें। इस ख़ास हिस्से और शोबे में इस्लाम के साथ अक़ीदत हो, इबादत गुज़ारियाँ हों, तसबीह व मुसल्ला हो, ख़ुदा का ज़िक्र हो, खाने-पीने और कुछ समाजी मामलों में परहेज़गारियाँ हों और वह सब कुछ हो जिसे मज़हबी काम और तरीक़ा कहा जाता है, मगर इस शोबे के सिवा उनकी ज़िन्दगी के तमाम दूसरे पहलू उनके मुसलिम होने की हैसियत से अलग हों। वे मुहब्बत करें तो अपने नफ़्स या अपने मफ़ाद या अपने मुल्क व क़ौम या किसी और की ख़ातिर करें। वे दुशमनी करें और किसी से जंग करें तो वह भी ऐसे ही किसी दुनियवी या नफ़्सानी ताल्लुक़ की बिना पर करें। उनके कारोबार, उनके लेन-देन, उनके मामले और ताल्लुक़ात, उनका अपने बाल-बच्चों, अपने ख़ानदान, अपनी सोसायटी और अपने मामला करनेवाले लोगों के साथ बरताव सबका सब एक बड़ी हद तक दीन से आज़ाद और दुनियवी हैसियतों पर आधारित हो। एक ज़मींदार की हैसियत से, एक व्यापारी की हैसियत से, एक हुक्मराँ की हैसियत से, एक सिपाही की हैसियत से, एक पेशेवर की हैसियत से उनकी अपनी एक मुस्तक़िल हैसियत हो, जिसका उनके मुसलमान होने की हैसियत से कोई ताल्लुक़

तय्यब कलिमे के मानी

मुसलमान भाइयो ! आपको मालूम है कि इनसान इस्लाम के दायरे में एक कलिमा पढ़कर दाख़िल होता है और वह कलिमा भी कुछ बहुत ज़्यादा लम्बा-चौड़ा नहीं है, सिर्फ़ कुछ शब्द हैं :

لآ إلٰـهَ إلاَّ اللّٰهُ مُحَمَّدٌ رَّسُوْلُ اللّٰهِ.

'ला इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह ।'

इन शब्दों को ज़बान से अदा करते ही आदमी कुछ से कुछ हो जाता है— पहले काफ़िर था, अब मुसलमान हो गया । पहले नापाक था, अब पाक हो गया । पहले ख़ुदा के ग़ज़ब का मुस्तहिक़ था, अब उसका प्यारा हो गया । पहले दोज़ख़ में जानेवाला था, अब जन्नत का दरवाज़ा उसके लिए खुल गया, और बात सिर्फ़ इतने पर ही नहीं रहती— इसी कलिमे की वजह से आदमी और आदमी में बड़ा फ़र्क़ हो जाता है । जो इस कलिमे के पढ़नेवाले हैं वे एक उम्मत होते हैं और जो इससे इनकार करते हैं, वे दूसरी उम्मत हो जाते हैं । बाप अगर कलिमा पढ़नेवाला है और बेटा इससे इनकार करता है, तो गोया बाप, बाप न रहा और बेटा, बेटा न रहा । बाप की जायदाद से उस बेटे को वरसा (हिस्सा) न मिलेगा । ग़ैर आदमी (ग़ैर मुस्लिम) अगर कलिमा पढ़नेवाला है और उस घर की बेटी ब्याहता है, तो वह और उसकी औलाद तो उस घर से वरसा पाएगी, मगर यह अपनी कोख का बेटा सिर्फ़ इस वजह से कि कलिमे को नहीं मानता, ग़ैरों का ग़ैर बन जाएगा । गोया यह कलिमा ऐसी चीज़ है कि ग़ैरों को एक-दूसरे से मिला देती है और अपनों को एक-दूसरे से काट देती है, यहाँ तक कि इस कलिमे का ज़ोर इतना है कि ख़ून और जन्म के रिश्ते भी इसके मुक़ाबले में कुछ नहीं ।

इतना बड़ा फ़र्क़ क्यों ?

अब ज़रा इस बात पर ग़ौर कीजिए कि यह इतना बड़ा फ़र्क़ जो आदमी और आदमी में हो जाता है यह आख़िर क्यों होता है ? कलिमे में है क्या ?

सिर्फ़ चन्द हुरूफ़ ही तो हैं— लाम, अलिफ़, हे, मीम, दाल, सीन और ऐसे ही दो-चार हुरूफ़ और । इन हुरूफ़ों को मिलाकर मुँह से निकाल दिया जाए तो क्या कोई जादू हो जाता है कि आदमी की काया पलट जाए ? आदमी और आदमी में क्या बस इतनी-सी बात से ज़मीन और आसमान का फ़र्क़ हो सकता है ?

मेरे भाइयो ! आप ज़रा समझ से काम लेंगे तो आपकी अक़्ल ख़ुद कह देगी कि सिर्फ़ मुँह खोलने और ज़बान हिलाकर चन्द हुरूफ़ बोल देने की इतनी बड़ी तासीर नहीं हो सकती । बुतपरस्त ज़रूर समझते हैं कि बस एक मंत्र पढ़ देने से पहाड़ हिल जाएगा, ज़मीन फट जाएगी और चश्में उबलने लगेंगे; चाहे मंत्र के मानी की किसी को ख़बर न हो, क्योंकि वे समझते हैं कि सारी तासीर बस हरफ़ों में है, वह ज़बान से निकले और जादू के दरवाज़े खुल गए । मगर इस्लाम में यह बात नहीं है । यहाँ असल चीज़ मानी हैं । लफ़्ज़ों का असर मानी से है । मानी अगर न हों और वह दिल में न उतरें और उनके ज़ोर से आपके ख़यालात, आपके अख़लाक़ और आपके आमाल न बदलें तो निरे अलफ़ाज़ बोल देने से कुछ असर नहीं होगा ।

इस बात को मैं एक मोटी-सी मिसाल से आपको समझाऊँ! मान लो आपको सर्दी लगती है । अगर आप ज़बान से रूई-लिहाफ़, रूई-लिहाफ़ पुकारना शुरू कर दें तो सर्दी लगनी बन्द न होगी चाहे आप रात भर में एक लाख तसबीहें रूई-लिहाफ़ की पढ़ डालें । हाँ, अगर लिहाफ़ में रूई भरवाकर ओढ़ लेंगे तो सर्दी लगनी बन्द हो जाएगी । मान लीजिए कि आपको प्यास लग रही है । अगर आप सुबह से शाम तक पानी-पानी पुकारते रहे तो प्यास न बुझेगी । हाँ, पानी का एक घूँट लेकर पी लेंगे तो कलेजे की सारी आग तुरन्त ठण्डी हो जाएगी । मान लीजिए कि आपको नज़ला-बुख़ार हो जाता है । इस हाल में अगर बनफ़्शा गावज़बान, बनफ़्शा गावज़बान की तसबीहें आप पढ़नी शुरू कर देंगे तो नज़ला-बुख़ार में कुछ कमी न होगी । इन दवाओं का जोशाँदा बनाकर पी लेंगे तो नज़ला-बुख़ार ख़ुद भाग जाएगा । बस यही हाल तय्यब कलिमे का भी है । सिर्फ छः-सात शब्द बोल देने से इतना बड़ा फ़र्क़ नहीं होता कि आदमी काफ़िर से मुसलमान

हो जाए, नापाक से पाक हो जाए, धुतकारा हुआ होने के बजाए प्यारा बन जाए, दोज़ख़ी से जन्नती बन जाए। यह फ़र्क़ सिर्फ़ इस तरह होगा कि पहले इन लफ़्ज़ों का मतलब समझें और वह मतलब आपके दिल में उतर जाए, फिर मतलब को समझ-बूझकर जब आप इन अलफ़ाज़ को ज़बान से निकालें तो आपको अच्छी तरह यह एहसास हो कि आप अपने ख़ुदा के सामने और सारी दुनिया के सामने कितनी बड़ी बात का इक़रार कर रहे हैं और इस इक़रार से आपके ऊपर कितनी बड़ी ज़िम्मेदारी आ गई है। फिर यह समझते हुए जब आपने इक़रार कर लिया तो इसके बाद आपके ख़यालात (विचारों) पर और आपकी सारी ज़िन्दगी पर इस कलिमे का क़बज़ा हो जाना चाहिए, फिर आपको अपने दिल व दिमाग़ में किसी ऐसी बात को जगह न देनी चाहिए जो इस कलिमे के ख़िलाफ़ हो। फिर आपको हमेशा के लिए बिलकुल फ़ैसला कर लेना चाहिए कि जो बात इस कलिमे के ख़िलाफ़ है वह झूठी है और यह कलिमा सच्चा है, फिर ज़िंदगी के सारे मामलों में यह कलिमा आपका हाकिम होना चाहिए। इस कलिमे का इक़रार करने के बाद आप काफ़िरों की तरह आज़ाद नहीं रहे कि जो चाहें करें, बल्कि अब आप इस कलिमे के पाबन्द हैं, जो वह कहे उसको करना पड़ेगा और जिससे वह मना करे उसको छोड़ना पड़ेगा। इस तरह कलिमा पढ़ने से आदमी मुसलमान होता है और इस तरह कलिमा पढ़ने की वजह से आदमी और आदमी में इतना बड़ा फ़र्क़ होता है, जिसका ज़िक्र मैंने अभी आप से किया।

कलिमे का मतलब

आइए अब मैं आपको बताऊँ कि कलिमे का मतलब क्या है और इसको पढ़कर आदमी किस चीज़ का इक़रार करता है और इसका इक़रार करते ही आदमी किस चीज़ का पाबन्द हो जाता है।

कलिमे के मानी ये हैं कि, ''अल्लाह के सिवा कोई और ख़ुदा नहीं है और हज़रत मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) अल्लाह के रसूल हैं।'' कलिमे में इलाह का जो लफ़्ज़ आया है उसके मानी 'ख़ुदा' के हैं। ख़ुदा उसको कहते हैं जो मालिक हो, हाकिम हो, पैदा करनेवाला

हो, पालने और पोसनेवाला हो, दुआओं का सुनने और क़बूल करनेवाला हो और इसका मुस्तहिक़ हो कि उसकी इबादत की जाए । अब जो आपने 'ला इला-ह इल्लल्लाह' कहा तो इसके मानी यह हुए कि अव्वल तो आपने यह इक़रार किया कि यह दुनिया न तो बेख़ुदा के बनी है और न ऐसा ही है कि इसके बहुत-से ख़ुदा हों, बल्कि दरअसल इसका बनानेवाला ख़ुदा है और वह ख़ुदा एक ही है, और उस एक ज़ात के सिवा ख़ुदाई किसी की नहीं है । दूसरी बात जिसका आपने कलिमा पढ़ते ही इक़रार किया वह यह है कि वही एक ख़ुदा आपका और सारी दुनिया का मालिक है । आप और आपकी हर चीज़ और दुनिया की हर चीज़ उसकी है । पैदा करनेवाला वह है, रोज़ी देनेवाला वह है, मौत और ज़िंदगी उसी की तरफ़ से है, दुख और सुख भी उसी की तरफ़ से है, जो कुछ किसी को मिलता है उसका देनेवाला हक़ीक़त में वह (अल्लाह) है और जो कुछ किसी से छीना जाता है उसका छीननेवाला भी असल में वही (अल्लाह) है । डरना चाहिए तो उसी से, माँगना चाहिए तो उसी से, सिर झुकाना चाहिए तो उसी के सामने, इबादत और बन्दगी की जाए तो उसी की । उसके सिवा हम किसी के बन्दे और ग़ुलाम नहीं हैं और उसके सिवा कोई हमारा मालिक और हाकिम नहीं है । हमारा असली फ़र्ज़ यह है कि उसी का हुक्म मानें और उसी के क़ानून पर चलें ।

अल्लाह से क़ौल व इक़रार

यह है वह क़ौल व इक़रार जो 'ला इला-ह इल्लल्लाह' पढ़ते ही आप अपने ख़ुदा से करते हैं और सारी दुनिया को गवाह बनाकर करते हैं । इसकी ख़िलाफ़वर्ज़ी करेंगे तो आपकी ज़बान, आपके हाथ-पाँव, आपका रोंगटा-रोंगटा और ज़मीन और आसमान का एक-एक ज़र्रा, जिसके सामने आपने झूठा इक़रार किया, आपके ख़िलाफ़ ख़ुदा की अदालत में गवाही देगा और आप ऐसी बेबसी की हालत में वहाँ खड़े होंगे कि एक भी गवाह आपको सफ़ाई पेश करने के लिए न मिलेगा, कोई वकील या बैरिस्टर वहाँ आपकी तरफ़ से पैरवी करनेवाला न होगा; बल्कि ख़ुद वकील साहब और बैरिस्टर साहब जो दुनिया की अदालतों में क़ानून की उलट-फेर करते फिरते हैं, ये भी वहाँ आपकी ही तरह बेबसी की हालत में खड़े होंगे । वह अदालत

ऐसी नहीं है जहाँ आप झूठी गवाहियाँ और जाली दस्तावेज़ें पेश करके और ग़लत पैरवी करके बच जाओगे । दुनिया की पुलिस से आप अपना जुर्म छिपा सकते हैं, ख़ुदा की पुलिस से नहीं छिपा सकते । दुनिया की पुलिस रिशवत खा सकती है, ख़ुदा की पुलिस रिशवत खानेवाली नहीं । दुनिया के गवाह झूठ बोल सकते हैं, ख़ुदा के गवाह बिलकुल सच्चे हैं । दुनिया के हाकिम बेइनसाफ़ी कर सकते हैं, ख़ुदा ऐसा हाकिम नहीं जो बेइनसाफ़ी करे । फिर ख़ुदा जिस जेल में डालेगा उससे बचकर भागने का भी कोई रास्ता नहीं है । इसलिए ख़ुदा के साथ झूठा इक़रारनामा करना बहुत बड़ी बेवक़ूफ़ी और सबसे बड़ी बेवक़ूफ़ी है । जब आप इक़रार करते हैं तो ख़ूब सोच-समझकर करें और उसको पूरा करें, वरना आप पर कोई ज़बरदस्ती नहीं है कि ख़्वाह-मख़्वाह ज़बानी ही इक़रार कर लें, क्योंकि खोखला और बेहक़ीक़त ज़बानी इक़रार महज़ बेकार है ।

रसूल (सल्ल०) की रहनुमाई का इक़रार

'ला इला-ह इल्लल्लाह' कहने के बाद आप 'मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह' कहते हैं । इसके मानी हैं कि आपने यह इक़रार कर लिया कि मुहम्मद (सल्ल०) ही वह पैग़म्बर हैं जिनके ज़रिए से ख़ुदा ने अपना क़ानून आपके पास भेजा है । ख़ुदा को अपना आक़ा और शहंशाह मान लेने के बाद यह मालूम होना ज़रूरी था कि उस शहंशाह के अहकाम और आदेश क्या हैं ? हम कौन से काम करें जिनसे वह ख़ुश होता है और कौन से काम न करें जिनसे वह नाराज़ होता है ? किस क़ानून पर चलने से वह हमको बख़्शेगा और उसकी ख़िलाफ़वर्ज़ी करने पर वह हमको सज़ा देगा ? ये सब बातें बताने के लिए ख़ुदा ने हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को अपना पैग़म्बर मुक़र्रर किया, आप (सल्ल०) के ज़रिए से अपनी किताब हमारे पास भेजी और आप (सल्ल०) ने ख़ुदा के हुक्म के मुताबिक़ ज़िंदगी बसर करके हमको बता दिया कि मुसलमानों को इस तरह ज़िंदगी बसर करनी चाहिए । इसलिए आपने 'मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह' कहा तो गोया इक़रार कर लिया कि जो क़ानून और जो तरीक़ा हुज़ूर (सल्ल०) ने बताया है, आप उसी की पैरवी करेंगे और जो क़ानून इसके ख़िलाफ़ है उसपर लानत भेजेंगे । यह इक़रार करने के बाद अगर आपने हुज़ूर (सल्ल०) के लाए हुए क़ानून को छोड़ दिया

और दुनिया के क़ानून को मानते रहे तो आपसे बढ़कर झूठा और बेईमान कोई न होगा; क्योंकि आप यही इक़रार करके तो इस्लाम में दाख़िल हुए थे कि मुहम्मद (सल्ल०) ही का लाया हुआ क़ानून हक़ है और उसी की आप पैरवी करेंगे । इसी इक़रार की बदौलत तो आप मुसलमानों के भाई बने, इसी की बदौलत तो आपने बाप से मीरास पाई, इसी की बदौलत एक मुसलमान औरत से आपका निकाह हुआ, इसी की बदौलत आपकी औलाद जाएज़ औलाद बनी, इसी की बदौलत आपको यह हक़ मिला कि तमाम मुसलमान आपके मददगार बनें, आपको ज़कात दें, आपकी जान-माल और इज़्ज़त व आबरू की हिफ़ाज़त का ज़िम्मा लें, और इन सबके बावजूद आपने अपना इक़रार तोड़ दिया; तो इससे बढ़कर दुनिया में कौन-सी बेईमानी हो सकती है । अगर आप 'ला इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह' के मानी जानते हैं और जान-बूझकर इसका इक़रार करते हैं तो आपको हर हाल में ख़ुदा के क़ानून की पैरवी करनी चाहिए, चाहे उसकी पैरवी पर मजबूर करनेवाली कोई पुलिस और अदालत इस दुनिया में नज़र न आती हो । जो इनसान यह समझता है कि ख़ुदा की पुलिस और फ़ौज और अदालत और जेल कहीं मौजूद नहीं है इसलिए उसके क़ानून को तोड़ना आसान है और गवर्नमेन्ट की पुलिस, फ़ौज, अदालत और जेल मौजूद हैं, इसलिए उसके क़ानून को तोड़ना मुशकिल है । ऐसे आदमी के बारे में मैं साफ़ कहता हूँ कि वह 'ला इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह' का झूठा इक़रार करता है । अपने ख़ुदा को, सारी दुनिया को, तमाम मुसलमानों को और ख़ुद अपने आपको धोखा देता है ।

इक़रार की ज़िम्मेदारियाँ

भाइयो और दोस्तो ! अभी मैंने आपके सामने तय्यब कलिमे के मानी बयान किए हैं, अब इसी सिलसिले में एक और पहलू की तरफ़ आपको तवज्जोह दिलाता हूँ ।

आप इक़रार करते हैं कि अल्लाह आपका और हर चीज़ का मालिक है । इसके क्या मानी हैं ? इसके मानी यह हैं कि आपकी जान आपकी अपनी नहीं, ख़ुदा की मिल्क है, आपके हाथ अपने नहीं, आपकी आँखें

और आपके कान और आपके जिस्म का कोई अंग आपका अपना नहीं। ये ज़मीनें जिनको आप जोतते हैं, ये जानवर जिनसे आप ख़िदमत लेते हो, ये माल और असबाब जिनसे आप फ़ायदा उठाते हैं, इनमें से कोई भी चीज़ आपकी नहीं है; हर चीज़ ख़ुदा की है और ख़ुदा की तरफ़ से अमानत के तौर पर आपको मिली है। इस बात का इक़रार करने के बाद आपको यह कहने का क्या हक़ है कि 'जान मेरी है, जिस्म मेरा है, माल मेरा है और फ़लाँ और फ़लाँ चीज़ मेरी है।' दूसरे को मालिक कहना और फिर उसकी चीज़ को अपनी क़रार देना बिलकुल एक झूठी बात है। अगर दरहक़ीक़त यह बात सच्चे दिल से मानते हैं कि इन सब चीज़ों का मालिक ख़ुदा ही है, तो इससे दो बातें आप पर ख़ुद ब ख़ुद लाज़िम हो जाती हैं। एक यह कि जब मालिक ख़ुदा है और उसने अपनी मिलकियत अमानत के तौर पर आपके हवाले की है तो जिस तरह मालिक कहता है उसी तरह आपको उन चीज़ों से काम लेना चाहिए। उसकी मरज़ी के ख़िलाफ़ अगर आप उनसे काम लेते हैं तो धोखाबाज़ी करते हैं। आप अपने इन हाथों और पाँव को भी उसकी पसन्द के ख़िलाफ़ हिलाने का हक़ नहीं रखते। आप इन आँखों से भी उसकी मरज़ी के ख़िलाफ़ देखने का हक़ नहीं रखते। आपको इस पेट में भी कोई ऐसी चीज़ डालने का हक़ नहीं है जो उसकी मरज़ी के ख़िलाफ़ हो। आपको इन ज़मीनों और इन जायदादों पर भी मालिक की मरज़ी के ख़िलाफ़ कोई हक़ हासिल नहीं है। आपकी बीवियाँ जिनको आप अपनी कहते हैं और आपकी औलाद, जिनको आप अपनी कहते हैं, ये भी सिर्फ़ इसलिए आपकी हैं कि आपके मालिक की दी हुई हैं। लिहाज़ा आपको उनसे भी अपनी ख़्वाहिश के मुताबिक़ नहीं, बल्कि मालिक के हुक्म के मुताबिक़ ही बरताव करना चाहिए। अगर इसके ख़िलाफ़ करोगे तो आपकी हैसियत ग़ासिब (हक़ मारनेवाला) की होगी। जिस तरह दूसरे की ज़मीन पर क़बज़ा करनेवाले को आप कहते हैं कि वह बेईमान है, इसी तरह अगर ख़ुदा की दी हुई चीज़ों को आप अपना समझकर अपनी मरज़ी के मुताबिक़ इस्तेमाल करेंगे, या ख़ुदा के सिवा किसी और की मरज़ी के मुताबिक़ उनसे काम लेंगे, तो वही बेईमानी का इलज़ाम आप पर भी आएगा। अगर मालिक की मरज़ी के मुताबिक़ काम करने में कोई नुक़सान होता है तो हुआ करे, जान जाती है तो जाए, हाथ-पाँव

टूटते हैं तो टूटें, औलाद का नुक़सान होता है तो हो, माल व जायदाद बरबाद हो तो हुआ करे । आपको क्यों ग़म हो ? जिसकी चीज़ है वही अगर नुक़सान पसन्द करता हो तो उसको हक़ है । हाँ, अगर मालिक की मरज़ी के ख़िलाफ़ आप काम करें और उसमें किसी चीज़ का नुक़सान हो तो बेशक आप मुजरिम होंगे, क्योंकि दूसरे के माल को आपने ख़राब किया । आप ख़ुद अपनी जान के मुख़तार नहीं हैं । मालिक की मरज़ी के मुताबिक़ जान देंगे तो मालिक का हक़ अदा करेंगे । उसके ख़िलाफ़ काम करने में जान देंगे तो वह बेईमानी होगी ।

इस्लाम लाना ख़ुदा पर एहसान नहीं

दूसरी बात यह है कि मालिक ने जो चीज़ आपको दी है उसको अगर आप मालिक ही के काम में ख़र्च करते हैं तो किसी पर एहसान नहीं करते, न मालिक पर एहसान है, न किसी और पर । आपने अगर उसकी राह में कुछ दिया, कुछ ख़िदमत की, या जान दे दी जो आपके नज़दीक बहुत बड़ी चीज़ है, तब भी कोई एहसान किसी पर नहीं किया । ज़्यादा से ज़्यादा जो काम आपने किया वह बस इतना ही तो है कि मालिक का हक़ जो आप पर था वह आपने अदा कर दिया । यह कौन-सी ऐसी बात है जिसपर कोई फूले और फ़ख़्र करे और यह चाहे कि उसकी तारीफ़ की जाए और यह समझे कि उसने कोई बहुत बड़ा काम किया है जिसपर उसकी बड़ाई तसलीम की जाए ? याद रखिए कि सच्चा मुसलमान मालिक की राह में कुछ ख़र्च करने या कुछ ख़िदमत करने के बाद फूलता नहीं है, बल्कि ख़ाकसारी इख़्तियार करता है । फ़ख़्र करना नेकियों को बरबाद कर देता है । तारीफ़ की चाहत जिसने की और उसके लिए कोई नेक काम किया, वह ख़ुदा के यहाँ किसी अच्छे बदले का हक़दार न रहा, क्योंकि उसने तो अपने काम का बदला दुनिया ही में माँगा और यहीं उसको मिल भी गया ।

अल्लाह का एहसान और हमारा रवैया

भाइयो ! अपने मालिक का एहसान देखिए कि अपनी चीज़ आपसे

लेता और फिर कहता है कि यह चीज़ मैने तुमसे ख़रीदी है और इसका बदला मैं तुम्हें दूँगा । अल्लाहु अकबर, इस शाने जूदो करम का भी कोई ठिकाना है ! क़ुरआन में आया है—

إِنَّ اللّٰهَ اشْتَرٰى مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ اَنْفُسَهُمْ وَاَمْوَالَهُمْ بِأَنَّ لَهُمُ الْجَنَّةَ ○

अल्लाह ने ईमानदारों से उनकी जानें और उनके माल ख़रीद लिए हैं, इसके बदले में उनके लिए जन्नत है । (क़ुरआन, 9:111)

यह तो मालिक का बरताव आपके साथ है । अब ज़रा अपना बरताव भी देखिए । जो चीज़ आपको मालिक ने दी थी और जिसको मालिक ने फिर आपसे मुआविज़ा देकर ख़रीद भी लिया, उसको ग़ैरों के हाथ बेचते हैं । निहायत ज़लील मुआविज़ा ले-लेकर बेचते हैं । वे मालिक की मरज़ी के ख़िलाफ़ आपसे काम लेते हैं और आप यह समझकर उनकी ख़िदमत करते हैं कि गोया रोज़ी देनेवाले वे हैं । आप अपने दिमाग़ बेचते हैं, अपने हाथ-पाँव बेचते हैं, अपने जिस्म की ताक़तें बेचते हैं और वह सब कुछ बेचते हैं जिसको ख़ुदा के बाग़ी ख़रीदना चाहते हैं । इससे बढ़कर बदअख़लाक़ी और क्या हो सकती है ? बेची हुई चीज़ को फिर बेचना क़ानूनी और अख़लाक़ी जुर्म है । दुनिया में इसपर दग़ाबाज़ी और धोखाधड़ी का मुक़दमा चलाया जाता है । क्या आप समझते हैं कि ख़ुदा की अदालत में इसपर मुक़दमा नहीं चलाया जाएगा ?

तय्यब कलिमा और ख़बीस कलिमा

मुसलमान भाइयो ! पिछले ख़ुतबे में तय्यब कलिमे के बारे में मैंने आपसे कुछ कहा था । आज फिर उसी कलिमे की कुछ और तशरीह मैं आपके सामने बयान करूँगा, इसलिए कि यह कलिमा ही इस्लाम की बुनियाद है, इसी के ज़रिए से आदमी इस्लाम में दाख़िल होता है और कोई शख़्स हक़ीक़त में मुसलमान बन ही नहीं सकता जब तक कि वह कलिमे को पूरी तरह समझ न ले और अपनी ज़िन्दगी को इसके मुताबिक़ न बना ले ।

अल्लाह तआला ने अपनी किताब क़ुरआन पाक में इस कलिमे की तारीफ़ इस तरह फ़रमाई है :

اَلَمْ تَرَ كَيْفَ ضَرَبَ اللّٰهُ مَثَلاً كَلِمَةً طَيِّبَةً كَشَجَرَةٍ طَيِّبَةٍ اَصْلُهَا ثَابِتٌ وَّفَرْعُهَا فِى السَّمَاءِ تُؤْتِىٓ اُكُلَهَا كُلَّ حِيْنٍۭ بِاِذْنِ رَبِّهَاؕ وَ يَضْرِبُ اللّٰهُ الْاَمْثَالَ لِلنَّاسِ لَعَلَّهُمْ يَتَذَكَّرُوْنَ○ وَمَثَلُ كَلِمَةٍ خَبِيْثَةٍ كَشَجَرَةٍ خَبِيْثَةِ ۨاجْتُثَّتْ مِنْ فَوْقِ الْاَرْضِ مَالَهَا مِنْ قَرَارٍ○ يُثَبِّتُ اللّٰهُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا بِالْقَوْلِ الثَّابِتِ فِى الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَفِى الْاٰخِرَةِ ۚ وَيُضِلُّ اللّٰهُ الظّٰلِمِيْنَ ۗ وَيَفْعَلُ اللّٰهُ مَا يَشَآءُ○ ابراہیم

तय्यब कलिमे की मिसाल ऐसी है जैसे कोई अच्छी क़िस्म का पेड़ हो जिसकी जड़ें ज़मीन में ख़ूब जमी हुई हों, जिसकी शाख़ें आसमान तक फैली हुई हों और जो हर वक़्त अपने पालनहार के हुक्म से फल पर फल लाए चला जाता हो— इसके ख़िलाफ़ ख़बीस कलिमा यानी बुरा अक़ीदा और झूठा क़ौल ऐसा है जैसे एक बुरे क़िस्म का जंगली पेड़ कि वह बस ज़मीन के ऊपर ही होता है और एक इशारे में जड़ छोड़ देता है, क्योंकि उसकी जड़

गहरी जमी हुई नहीं होती । (कुरआन, 14:24-27)

यह ऐसी बेजोड़ मिसाल अल्लाह तआला ने दी है कि अगर आप इसपर ग़ौर करें तो आपको इससे बड़ा सबक़ मिलेगा । देखिए, आपके सामने दोनों क़िस्म के पेड़ों की मिसालें मौजूद हैं । एक तो यह आम का पेड़ है, कितना गहरा जमा हुआ है, कितनी ऊँचाई तक उठा हुआ है, कितनी इसकी शाख़ें फैली हुई हैं, कितने अच्छे फल इसमें लगते हैं ! यह बात इसे क्यों हासिल हुई ? इसलिए कि इसकी गुठली ज़ोरदार थी, इसको पेड़ बनने का हक़ हासिल था और वह हक़ इतना सच्चा था कि जब उसने अपने हक़ का दावा किया तो ज़मीन ने, पानी ने, हवा ने, दिन की गरमी और रात की ठंडक ने, ग़रज़ हर चीज़ ने उसके हक़ को तस्लीम किया और उसने जिससे जो कुछ माँगा, हर एक ने उसको दिया । इस तरह वह अपने हक़ के ज़ोर से इतना बड़ा पेड़ बन गया और अपने मीठे फल देकर उसने साबित भी कर दिया कि हक़ीक़त में वह इसी क़ाबिल था कि ऐसा पेड़ बने और ज़मीन व आसमान की सारी ताक़तों ने मिलकर अगर इसका साथ दिया तो कुछ ग़लत नहीं किया । बल्कि उन्हें ऐसा करना ही चाहिए था, इसलिए कि पेड़ों को ख़ुराक देने और बढ़ाने और पकाने की जो ताक़त ज़मीन, पानी, हवा और दूसरी चीज़ों के पास है, वह इसी काम के लिए तो है कि अच्छी ज़ातवाले पेड़ों के काम आए ।

इसके मुक़ाबले में ये झाड़-झंकाड़ और ख़ुदरौ पौधे हैं । इनकी हैसियत ही क्या है ? ज़रा-सी जड़ कि एक बच्चा उखाड़ ले, नर्म और बोदे इतने कि हवा के एक झोंके से मुरझा जाएँ, हाथ लगाओ तो काँटे आपकी ख़बर लें, चखें तो मुँह का मज़ा ख़राब कर दें । रोज़ ख़ुदा जाने कितने पैदा होते हैं और कितने ही उखाड़े जाते हैं । इनका यह हाल क्यों है ? इसलिए कि इनके पास हक़ का वह ज़ोर नहीं जो आम के पास है । जब ऊँची क़िस्म के पेड़ नहीं होते तो ज़मीन बेकार पड़े-पड़े उकता जाती है और इन पौधों को अपने अन्दर जगह दे देती है । कुछ मदद पानी कर देता है और कुछ हवा अपने पास से सामान दे देती है, मगर ज़मीन और आसमान की कोई चीज़ भी ऐसे पौधों का हक़ मानने के लिए तैयार नहीं होती । इसलिए न ज़मीन अपने अन्दर इनकी जड़ें फैलने देती है, न पानी इनको

दिल खोलकर ख़ुराक देता है और न हवा खुले दिल से इनको परवान चढ़ाती है। फिर जब इतनी-सी बिसात पर यह ख़राब पौधे बदमज़ा, काँटेदार और ज़हरीले बनकर उठते हैं, तो यह बात साबित हो जाती है कि ज़मीन और आसमान की ताक़तें ऐसे पौधे उगाने के लिए नहीं थीं। इनको इतनी ज़िन्दगी भी मिली तो बहुत मिली।

इन दोनों मिसालों को सामने रखिए और फिर तय्यब कलिमे और ख़बीस कलिमे के फ़र्क़ पर ग़ौर कीजिए।

तय्यब कलिमा क्या है ?

तय्यब कलिमा क्या है ? एक सच्ची बात है। ऐसी सच्ची बात कि दुनिया में इससे ज़्यादा सच्ची बात कोई हो ही नहीं सकती। सारे जहान का ख़ुदा एक अल्लाह है, इस बात पर ज़मीन और आसमान की हर चीज़ गवाही दे रही है। ये इनसान, ये जानवर, ये पेड़, ये पत्थर, ये रेत के ज़र्रे, यह बहती हुई नहर, यह चमकता हुआ सूरज, ये सारी चीज़ें जो हर तरफ़ फैली हुई हैं, इनमें से कौन-सी चीज़ है जिसको अल्लाह के सिवा किसी और ने पैदा किया हो, जो अल्लाह के सिवा किसी और की मेहरबानी से ज़िन्दा और क़ायम रह सके, जिसको अल्लाह के सिवा कोई और फ़ना कर सकता हो ? फिर जब यह सारा संसार अल्लाह का पैदा किया हुआ है और अल्लाह ही की मेहरबानी से क़ायम है और अल्लाह ही इसका मालिक और हाकिम है, तो जिस समय आप कहेंगे कि "इस जहान में उस एक अल्लाह के सिवा किसी और की ख़ुदाई नहीं है" तो ज़मीन व आसमान की एक-एक चीज़ पुकारेगी कि आपने बिलकुल सच्ची बात कही। हम सब आपके इस क़ौल की सच्चाई पर गवाह हैं। जब आप उसके आगे सिर झुकाएँगे तो कायनात की हर चीज़ आपके साथ झुक जाएगी, क्योंकि ये सारी चीज़ें भी उसी की इबादतगुज़ार हैं। जब आप उसके फ़रमान की पैरवी करेंगे तो ज़मीन और आसमान की हर चीज़ आपका साथ देगी; क्योंकि ये सब भी तो उसी ख़ुदा की फ़रमाँबरदार हैं। जब आप उसकी राह में चलेंगे तो आप अकेले न होंगे, बल्कि कायनात के बेशुमार लश्कर आपके साथ चलेंगे, क्योंकि आसमान के सूरज से लेकर ज़मीन का एक मामूली ज़र्रा तक हर चीज़, हर आन उसी की राह में तो चल रही है।

जब आप उसपर भरोसा करेंगे तो किसी छोटी ताक़त पर भरोसा न करेंगे, बल्कि एक बड़ी ताक़त पर भरोसा करेंगे जो ज़मीन और आसमान के सारे ख़ज़ानों की मालिक है । ग़रज़ इस सच्चाई पर आप नज़र रखेंगे तो आपको मालूम होगा कि तय्यब कलिमे पर ईमान लाकर जो इनसान अपनी ज़िन्दगी को उसके मुताबिक़ बना लेगा तो ज़मीन और आसमान की सारी ताक़तें उसका साथ देंगी । दुनिया से लेकर आख़िरत तक वह फलता-फूलता ही चला जाएगा; और कभी एक लम्हे के लिए भी नाकामी व नामुरादी उसके पास न आएगी । यही चीज़ अल्लाह तआला ने बयान फ़रमाई है कि यह कलिमा ऐसा पेड़ है, जिसकी जड़ें ज़मीन में जमी हुई हैं और शाख़ें आसमान पर फैली हुई हैं और हर वक़्त यह ख़ुदा के हुक्म से फल लाता रहता है ।

ख़बीस कलिमा क्या है ?

इसके मुक़ाबले में ख़बीस कलिमे को देखिए । ख़बीस कलिमा क्या चीज़ है ? यह कि इस जहान का कोई ख़ुदा नहीं, या यह कि एक अल्लाह के सिवा किसी और की भी ख़ुदाई है । ग़ौर कीजिए, इससे बढ़कर झूठी और बेअसल बात और क्या हो सकती है ? ज़मीन और आसमान की कौन-सी चीज़ इसपर गवाही देती है ? नास्तिक कहता है कि ख़ुदा नहीं है । ज़मीन और आसमान की हर चीज़ कहती है कि तू झूठा है । हमको और तुझको ख़ुदा ही ने पैदा किया है और उसी ख़ुदा ने तुझे वह ज़बान दी है जिससे तू यह झूठ बक रहा है । नास्तिक कहता है कि ख़ुदाई में दूसरे भी अल्लाह के शरीक हैं, दूसरे भी राज़िक़ (अन्नदाता) हैं, दूसरे भी मालिक हैं, दूसरे भी क़िस्मतें बनाते और बिगाड़ते हैं, दूसरे भी फ़ायदा व नुक़सान पहुँचाने की ताक़त रखते हैं, दूसरे भी दुआएँ सुननेवाले हैं, दूसरे भी मुरादें पूरी करनेवाले हैं, दूसरे भी ऐसे हैं जिनसे डरा जाए, दूसरे भी भरोसा करने के क़ाबिल हैं । इस ख़ुदाई में दूसरों का भी हुक्म चलता है और ख़ुदा के सिवा दूसरों का फ़रमान और क़ानून भी पैरवी के लायक़ है । इसके जवाब में ज़मीन और आसमान की हर चीज़ कहती है कि तू बिलकुल झूठा है । हर एक बात जो तू कह रहा है, यह हक़ीक़त के ख़िलाफ़ है । अब ग़ौर कीजिए कि यह ख़बीस कलिमा जो शख़्स इख़तियार करेगा

और इसके मुताबिक़ जो शख़्स ज़िन्दगी बसर करेगा, दुनिया और आख़िरत में वह कैसे फल और फूल सकता है ? अल्लाह ने अपनी मेरहबानी से ऐसे लोगों को मुहलत दे रखी है और रोज़ी का वादा उनसे किया है, इसलिए ज़मीन व आसमान की ताक़तें किसी न किसी तरह उसकी भी परवरिश करेंगी; जिस तरह वे झाड़-झंकाड़ और ख़ुदरौ पौधों की भी आख़िर परवरिश करती हैं, लेकिन कायनात की कोई चीज़ भी उसका हक़ समझकर उसका साथ न देगी और न पूरी ताक़त के साथ उसकी मदद करेगी । वह उन्हीं ख़ुदरौ पौधों की तरह होगा जिनकी मिसाल अभी आपके समाने बयान हुई है ।

नतीजों का फ़र्क़

यही फ़र्क़ दोनों के फलों में है । तय्यब कलिमा जब कभी फलेगा, उससे मीठे और मुफ़ीद फल ही पैदा होंगे । दुनिया में इससे अमन क़ायम होगा, नेकी और सच्चाई और इनसाफ़ का बोल-बाला होगा और ख़ुदा के बन्दे इससे फ़ायदा ही उठाएँगे । मगर ख़बीस कलिमे की जितनी परवरिश होगी उससे काँटेदार शाख़ें ही निकलेंगी । उसमें कड़वे-कसैले ही फल आएँगे, उसकी रग-रग में ज़हर ही भरा होगा । दुनिया में अपनी आँखों से देख लीजिए । जहाँ कुफ़्र, शिर्क और नास्तिकता का ज़ोर है, वहाँ क्या हो रहा है ? आदमी को आदमी फाड़ खाने की तैयारियाँ कर रहा है, आबादियों की आबादियाँ तबाह करने के सामान हो रहे हैं । ज़हरीली ग़ैसें बन रही हैं और दोज़ख़ की तरह दुनिया को भूनकर रख देनेवाले हथियार ईजाद हो रहे हैं, एक क़ौम दूसरी क़ौम को बरबाद कर देने पर तुली हुई है, जो ताक़तवर है वह कमज़ोर को ग़ुलाम बनाता है, सिर्फ़ इसलिए कि उसके हिस्से की रोटी ख़ुद छीनकर खा जाए । जो कमज़ोर है वह फ़ौज और पुलिस और जेल और फाँसी के ज़ोर से दबकर रहने और ताक़तवर का ज़ुल्म सहने पर मजबूर किया जाता है । फिर उन क़ौमों की अन्दरूनी हालत क्या है ? अख़लाक़ बद से बदतर हैं, जिनपर शैतान भी शरमाए । इनसान वह काम कर रहा है जो जानवर भी नहीं करते । माँऐं अपने बच्चों को अपने हाथ से हलाक करती हैं कि कहीं ये बच्चे उनके ऐश में ख़लल न डाल दें, शौहर अपनी बीवियों को ख़ुद ग़ैरों की बग़ल में देते हैं ताकि

उनकी बीवियाँ उनकी बग़ल में आएँ, नंगों के क्लब बनाए जाते हैं जिनमें मर्द और औरत जानवरों की तरह नंगे एक-दूसरे के सामने फिरते हैं । अमीर सूद के ज़रिए ग़रीबों का ख़ून चूस लेते हैं और मालदार नादारों से इस तरह काम लेते हैं कि मानो वे उनके ग़ुलाम हैं और सिर्फ़ उनकी सेवा ही के लिए पैदा हुए हैं । ग़रज इस ख़बीस कलिमे से जो पौधा भी जहाँ पैदा हुआ है काँटों से भरा हुआ है और जो भी फल उसमें लगता है कड़वा और ज़हरीला ही होता है ।

अल्लाह तआला इन दोनों मिसालों को बयान करने के बाद आख़िर में फ़रमाता है कि :

يُثَبِّتُ اللّٰهُ الَّذِيْنَ آمَنُوْا بِالْقَوْلِ الثَّابِتِ فِى الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَ فِى الْاٰخِرَةِ ج وَيُضِلُّ اللّٰهُ الظّٰلِمِيْنَ قف

तय्यब कलिमे पर, जो लोग ईमान लाएँगे अल्लाह तआला उनको एक मज़बूत क़ौल के साथ दुनिया और आख़िरत दोनों में सबात और जमाव बख़शेगा और इनके मुक़ाबिले में वह ज़ालिम लोग जो ख़बीस कलिमे को मानेंगे, अल्लाह उनकी सारी कोशिशों को भटका देगा । वे कभी कोई सीधा काम न करेंगे, जिससे दुनिया या आख़िरत में कोई अच्छा फल पैदा हो । (क़ुरआन, 14:27)

कलिमा पढ़नेवाला अपमानित क्यों ?

भाइयो ! तय्यब कलिमे और ख़बीस कलिमे का फ़र्क़ और दोनों के नतीजे आपने सुन लिए, अब आप यह सवाल ज़रूर करेंगे कि हम तो तय्यब कलिमे के माननेवाले हैं, फिर क्या बात है कि हम न फूलते हैं न फलते हैं और वे लोग जो ख़बीस कलिमे के माननेवाले हैं, क्यों फल-फूल रहे हैं ?

इसका जवाब मेरे ज़िम्मे है और मैं जवाब दूँगा, शर्त यह है कि आपमें से कोई मेरे जवाब पर बुरा न माने, बल्कि अपने दिल से पूछे कि मेरा

जवाब वाक़ई सही है या नहीं ।

अव्वल तो आपका यही कहना ग़लत है कि आप तय्यब कलिमे को मानते हैं और फिर भी न फूलते हैं, न फलते हैं । तय्यब कलिमे को मानने के मानी ज़बान से कलिमा पढ़ने के नहीं हैं । इसके मानी दिल से मानने के हैं और इस तरह मानने के हैं कि इसके ख़िलाफ़ कोई अक़ीदा आपके दिल में न रहे और इसके ख़िलाफ़ कोई काम आपसे न हो सके । मेरे भाइयो ! ख़ुदारा मुझे बताइए क्या आपका हक़ीक़त में यही हाल है ? क्या सैकड़ों ऐसे मुशरिकाना और काफ़िराना ख़यालात आपमें नहीं फैले हुए हैं जो तय्यब कलिमे के बिलकुल ख़िलाफ़ हैं ? क्या मुसलमान का सिर ख़ुदा के सिवा दूसरों के आगे नहीं झुक रहा है ? क्या मुसलमान को दूसरों से ख़ौफ़ नहीं आता ? क्या वह दूसरों की मदद पर भरोसा नहीं करता ? क्या वह दूसरों को रोज़ी देनेवाला (राज़िक़) नहीं समझता ? क्या वह ख़ुदा के क़ानून को छोड़कर दूसरों के क़ानून की ख़ुशी-ख़ुशी पैरवी नहीं करता ? क्या अपने आपको मुसलमान कहलानेवाले अदालतों में जाकर यह साफ़-साफ़ नहीं कहते कि हम शरअ को नहीं मानते, बल्कि रस्मो रिवाज को मानते हैं ? क्या आपमें ऐसे लोग मौजूद नहीं हैं जिनको दुनियवी फ़ायदों के लिए ख़ुदा के क़ानून की किसी दफ़ा को तोड़ने में झिझक नहीं होती ? क्या आपमें ऐसे लोग मौजूद नहीं हैं जिनको काफ़िरों के ग़ज़ब का डर है; मगर ख़ुदा के ग़ज़ब का डर नहीं, जो बद्दीनों को ख़ुश करने के लिए सब कुछ करने को तैयार हो जाते हैं, मगर ख़ुदा की ख़ुशी हासिल करने के लिए कुछ नहीं कर सकते ? जो अधर्मियों की हुकूमत को हुकूमत समझते हैं और ख़ुदा की हुकूमत के मुताल्लिक़ उन्हें कभी याद भी नहीं आता कि वह भी कहीं मौजूद है ? ख़ुदा के लिए सच बताइए क्या यह सच नहीं है ? अगर यह सच है तो फिर किस मुँह से आप कहते हैं कि हम तय्यब कलिमे को माननेवाले हैं और इसके बावजूद हम नहीं फूलते-फलते ? पहले सच्चे दिल से ईमान तो लाइए और तय्यब कलिमे के मुताबिक ज़िन्दगी इख़तियार तो करिए, फिर अगर वह पेड़ न पैदा हो जो ज़मीन में गहरी जड़ों के साथ जमनेवाला और आसमान तक छा जानेवाला है तो, अल्लाह पनाह में रखे, अपने ख़ुदा को झूठा समझ लेना कि उसने आपको ग़लत बात का यक़ीन दिलाया ।

क्या ख़बीस कलिमा के माननेवाले फल-फूल रहे हैं ?

फिर आपका यह कहना भी ग़लत है कि जो ख़बीस कलिमे को मानते हैं वे वाक़ई दुनिया में फल-फूल रहे हैं । ख़बीस कलिमे को माननेवाले न कभी फले-फूले हैं, न आज फल-फूल रहे हैं । आप दौलत का ढेर, ऐशो आराम के सामान और ज़ाहिरी शानो शौकत को देखकर समझते हैं कि वे फल-फूल रहे हैं, मगर उनके दिलों से पूछिए कि कितने हैं जिनके दिलों को इतमीनान हासिल है ? उनके ऊपर ऐश के सामान लदे हुए हैं, मगर उनके दिलों में आग की भट्टियाँ सुलग रही हैं जो उनको किसी वक़्त चैन नहीं लेने देतीं । ख़ुदा के क़ानून की ख़िलाफ़वर्ज़ी ने उनके घरों को दोज़ख़ बना रखा है । अख़बारों में देखिए कि यूरोप और अमरीका में ख़ुदकुशी का कितना ज़ोर है । तलाक़ की कैसी कसरत है, नस्लें किस तरह घट रही हैं और घटाई जा रही हैं, बुरे-बुरे रोगों ने किस तरह लाखों इनसानों की ज़िन्दगियाँ तबाह कर दी हैं । अनेक वर्गों के बीच रोटी के लिए कैसी कशमकश बरपा है । हसद, डाह, कीना और दुशमनी ने किस तरह एक ही जिन्स के आदमियों को आपस में लड़ा रखा है । ऐश पसन्दी ने लोगों के लिए जीवन को कितना कड़वा बना दिया है, और यह बड़े-बड़े अज़ीमुश्शान शहर जिनको दूर से देखकर आदमी रश्के जन्नत समझता है इनके अन्दर लाखों इनसान किस मुसीबत की ज़िन्दगी बसर कर रहे हैं । क्या इसी को फलना-फूलना कहते हैं ? क्या यही वह जन्नत है जिसपर आप लालच की निगाहें डालते हैं ?

मेरे भाइयो ! याद रखिए, ख़ुदा की बात कभी झूठी नहीं हो सकती । हक़ीक़त में तय्यब कलिमे के सिवा और कोई कलिमा नहीं जिसकी पैरवी करके इनसान को दुनिया में राहत और आख़िरत में कामयाबी हासिल हो सके । आप जिस तरफ़ चाहें नज़र दौड़ाकर देख लें, इसके ख़िलाफ़ आपको कहीं कोई चीज़ न मिल सकेगी ।

तय्यब कलिमे पर ईमान लाने का मक़सद

मुसलमान भाइयो ! इससे पहले दो ख़ुतबों में आपके सामने तय्यब कलिमे का मतलब बयान कर चुका हूँ । आज मैं इस सवाल पर बहस करना चाहता हूँ कि इस कलिमे पर ईमान लाने का फ़ायदा और उसकी ज़रूरत क्या है ?

हर काम का एक मक़सद है

यह तो आप जानते हैं कि आदमी जो काम भी करता है किसी न किसी ग़रज़ और किसी न किसी फ़ायदे के लिए करता है । बेग़रज़, बेफ़ायदा कोई काम नहीं किया करता । आप पानी क्यों पीते हैं ? इसलिए कि प्यास बुझे । मगर पानी पीने के बाद भी आपका वही हाल रहे जो पीने से पहले होता है तो आप हरगिज़ पानी न पिएँ, क्योंकि यह एक बेनतीजा काम होगा । आप खाना क्यों खाते हैं ? इसलिए कि भूख मिटे और आपमें ज़िन्दा रहने की ताक़त पैदा हो । अगर खाना खाने और न खाने का नतीजा एक ही हो तो आप यही कहेंगे कि यह एक बिलकुल फ़ज़ूल काम है । बीमारी में आप दवा क्यों लेते हैं ? इसलिए कि बीमारी दूर हो जाए और तन्दुरुस्ती हासिल हो । अगर दवा लेकर भी बीमारी का वही हाल हो जो दवा लेने से पहले था तो आप यही कहेंगे कि ऐसी दवा लेना बेकार है । आप खेती-बाड़ी में इतनी मेहनत क्यों करते हैं ? इसलिए कि ज़मीन से ग़ल्ला और फल और तरकारियाँ पैदा हों । अगर बीज बोने पर भी ज़मीन से कोई चीज़ न उगती तो आप हल चलाने और बीज बोने और पानी देने में इतनी मेहनत हरगिज़ न करते । ग़रज़ आप दुनिया में जो काम भी करते हैं उसमें ज़रूर कोई न कोई मक़सद होता है । अगर मक़सद हासिल हो तो आप कहते हैं कि काम ठीक हुआ और अगर मक़सद हासिल न हो तो आप कहते हैं कि काम ठीक नहीं हुआ ।

कलिमा पढ़ने का मक़सद

इस बात को ज़ेहन में रखिए और मेरे एक-एक सवाल का जवाब देते जाइए। सबसे पहला सवाल यह है कि कलिमा क्यों पढ़ा जाता है ? इसका जवाब आप इसके सिवा और कुछ नहीं दे सकते कि कलिमा पढ़ने का मक़सद यह है कि काफ़िर और मुसलमान में फ़र्क़ हो जाए। अब मैं पूछता हूँ कि फ़र्क़ होने का क्या मतलब है ? क्या इसका यह मतलब है कि काफ़िर की दो आँखें होती हैं तो मुसलमान की चार आँखें हो जाएँ या काफ़िर का एक सिर होता है तो मुसलमान के दो सिर हो जाएँ ? आप कहेंगे कि इसका यह मतलब नहीं है। फ़र्क़ होने का मतलब यह है कि काफ़िर के अंजाम और मुसलमान के अंजाम में फ़र्क़ हो। काफ़िर का अंजाम यह है कि आख़िरत में वह ख़ुदा की रहमत से महरूम हो जाए और नाकाम व नामुराद रहे; और मुसलमान का अंजाम यह है कि ख़ुदा की ख़ुशनूदी उसे हासिल हो और आख़िरत में वह कामयाब और बामुराद रहे।

आख़िरत की नाकामी व कामयाबी

मैं कहता हूँ कि यह जवाब आपने बिलकुल ठीक दिया, मगर मुझे यह बताइए कि आख़िरत क्या चीज़ है ? आख़िरत की नाकामी व नामुरादी से क्या मतलब है और वहाँ कामयाब और बामुराद होने का मतलब क्या है ? जब तक मैं इस बात को न समझ लूँ उस वक़्त तक आगे नहीं बढ़ सकता।

इस सवाल का जवाब आपको देने की ज़रूरत नहीं, इसका जवाब पहले ही दिया जा चुका है :

اَلدُّنْيَا مَزْرَعَةُ الْاٰخِرَةِ.

यानी दुनिया और आख़िरत दो अलग-अलग चीज़ें नहीं हैं, बल्कि एक ही सिलसिला है जिसकी इबतिदा दुनिया है और इनतिहा आख़िरत। इन दोनों में वही जोड़ है जो खेती और फ़सल में होता है। आप ज़मीन में हल जोतते हैं, फिर बीज बोते हैं, फिर पानी देते हैं, फिर खेती की देखभाल करते रहते हैं, यहाँ तक कि फ़सल तैयार हो जाती है और उसको काटकर

आप साल भर तक मज़े से खाते रहते हैं । आप ज़मीन में जिस चीज़ की खेती करेंगे, उसी की फ़सल तैयार होगी । गेहूँ बोएँगे तो गेहूँ पैदा होगा, काँटे बोएँगे तो काँटे ही पैदा होंगे, कुछ न बोएँगे तो कुछ न पैदा होगा । हल चलाने और बीज बोने और पानी देने और ख़ेती की रखवाली करने में जो-जो ग़लतियाँ और कोताहियाँ आपसे होंगी उन सबका बुरा असर आपको फ़सल काटने के मौक़े पर मालूम होगा । और अगर आपने यह सब काम अच्छी तरह किए हैं तो उनका फ़ायदा भी आप फ़सल ही काटने के वक़्त देखेंगे । बिलकुल यही हाल दुनिया और आख़िरत का है । दुनिया एक खेती है । इस खेती में आदमी को इसलिए भेजा गया है कि अपनी मेहनत और अपनी कोशिश से अपने लिए फ़सल तैयार करे । पैदाइश से लेकर मौत तक के लिए आदमी को इस काम की मुहलत दी गई है । इस मुहलत में जैसी फ़सल आदमी ने तैयार की है वैसी ही फ़सल वह मौत के बाद दूसरी ज़िन्दगी में काटेगा और फिर जो फ़सल वह काटेगा, उसी पर आख़िरत की ज़िन्दगी में उसका गुज़र-बसर होगा । अगर किसी ने उम्र भर दुनिया की खेती में अच्छे फल बोए हैं और उनको ख़ूब पानी दिया है और उनकी ख़ूब रखवाली की है तो आख़िरत की ज़िन्दगी में जब वह क़दम रखेगा तो अपनी मेहनत की कमाई एक हरे-भरे बाग़ की सूरत में तैयार पाएगा और उसे अपनी इस दूसरी ज़िन्दगी में फिर कोई मेहनत नहीं करनी पड़ेगी, बल्कि दुनिया में उम्र भर मेहनत करके जो बाग़ उसने लगाया था उसी बाग़ के फलों पर आराम से ज़िन्दगी बसर करेगा । इसी चीज़ का नाम जन्नत है और आख़िरत में बामुराद होने का यही मतलब है । इसके मुक़ाबिले में जो शख़्स अपनी दुनिया की ज़िन्दगी में काँटे और कड़वे, कसीले, ज़हरीले फल बोता रहा है, उसको आख़िरत की ज़िन्दगी में उन्हीं फलों की फ़सल तैयार मिलेगी । वहाँ फिर उसको दोबारा इतना मौक़ा नहीं मिलेगा कि अपनी इस ग़लती की तलाफ़ी कर सके और इस ख़राब फ़सल को जलाकर दूसरी अच्छी फ़सल तैयार कर सके । फिर तो उसको आख़िरत की सारी ज़िन्दगी उसी फ़सल पर बसर करनी होगी, जिसे वह दुनिया में तैयार कर चुका है । जो काँटे उसने बोए थे उन्हीं के बिस्तर पर उसे लेटना होगा और जो कड़वे, कसीले और ज़हरीले फल उसने लगाए थे वही उसको खाने पड़ेंगे । यही मतलब है आख़िरत में नाकाम व नामुराद

होने का ।

आख़िरत की यह तफ़सील जो मैने बयान की है, हदीस और क़ुरआन से भी इसकी यही तशरीह साबित है । इससे मालूम हुआ कि आख़िरत की ज़िन्दगी में इनसान का नामुराद या बामुराद होना और उसके अंजाम का अच्छा या बुरा होना दरअसल नतीजा है दुनिया की ज़िन्दगी में उसके इल्म और अमल के सही या ग़लत होने का ।

काफ़िर और मुसलमान के अंजाम में फ़र्क़ क्यों ?

यह बात जब आपने समझ ली तो साथ ही साथ यह बात भी अपने आप समझ में आ जाती है कि मुसलमान और काफ़िर के अंजाम का फ़र्क़ यूँ ही बिला वजह नहीं हो जाता । दरअसल अंजाम का फ़र्क़ शुरू ही के फ़र्क़ का नतीजा है । जब तक दुनिया में मुसलमान और काफ़िर के इल्म और अमल के दरमियान फ़र्क़ न होगा, आख़िरत में भी इन दोनों के अंजाम के दरमियान फ़र्क़ नहीं हो सकता । यह किसी तरह मुमकिन नहीं है कि दुनिया में एक शख़्स का इल्म व अमल वही हो जो काफ़िर का इल्म और अमल है और फिर आख़िरत में वह उस अंजाम से बच जाए जो काफ़िर का अंजाम होता है ।

कलिमा का मक़सद — इल्म व अमल की दुरुस्ती

अब फिर वही सवाल पैदा होता है कि कलिमा पढ़ने का मक़सद क्या है ? पहले आपने इसका जवाब यह दिया था कि कलिमा पढ़ने का मक़सद यह है कि काफ़िर के अंजाम और मुसलमान के अंजाम में फ़र्क़ हो । अब अंजाम और आख़िरत की जो तशरीह आपने सुनी है उसके बाद आपको अपने जवाब पर फिर ग़ौर करना होगा । अब आपको यह कहना पड़ेगा कि कलिमा पढ़ने का मक़सद दुनिया में इनसान के इल्म और अमल को दुरुस्त करना है, ताकि आख़िरत में उसका अंजाम दुरुस्त हो । यह कलिमा इनसान को दुनिया में वह बाग़ लगाना सिखाता है जिसके फल आख़िरत में उसको तोड़ने हैं । अगर आदमी इस कलिमे को नहीं मानता तो उसको बाग़ लगाने का तरीक़ा ही नहीं मालूम हो सकता । फिर वह बाग़ लगाएगा

किस तरह और आख़िरत में फल किस चीज़ के तोड़ेगा ? और अगर आदमी इस कलिमे को ज़बान से पढ़ लेता है, मगर उसका इल्म भी वही रहता है जो न पढ़नेवाले का इल्म था और उसका अमल भी वैसा ही रहता है जैसा काफ़िर का अमल था, तो आपकी अक़्ल ख़ुद कह देगी कि ऐसा कलिमा पढ़ने से कुछ हासिल नहीं । कोई वजह नहीं कि ऐसे शख़्स का अंजाम काफ़िर के अंजाम से मुख़्तलिफ़ हो । ज़बान से कलिमा पढ़कर उसने ख़ुदा पर कोई एहसान नहीं किया कि बाग़ लगाने का तरीक़ा भी वह न सीखे, बाग़ लगाये भी नहीं, सारी उम्र काँटे ही बोता रहे और फिर भी आख़िरत में उसको फलों से लदा हुआ लहलहाता बाग़ मिल जाए, जैसा कि पहले मैं कई मिसालें देकर बयान कर चुका हूँ । जिस काम के करने और न करने का नतीजा एक हो वह काम फ़ज़ूल और बेमानी है । जिस दवा को लेने के बाद भी बीमार का वही हाल रहे जो दवा लेने से पहले था, वह दवा हक़ीक़त में दवा नहीं है । बिलकुल इसी तरह अगर कलिमा पढ़नेवाले आदमी का इल्म और अमल भी वैसा ही रहे जो कलिमा न पढ़नेवाले आदमी का होता है, तो ऐसा कलिमा पढ़ना बिलकुल बेमानी है । जब दुनिया ही में काफ़िर और मुसलिम की ज़िन्दगी में फ़र्क़ न हुआ तो आख़िरत में उनके अंजाम में फ़र्क़ कैसे हो सकता है ?

तय्यब कलिमा कौन-सा इल्म सिखाता है ?

अब यह सवाल सामने आता है कि वह कौन-सा इल्म है जो तय्यब कलिमा इनसान को सिखाता है और उस इल्म को सीखने के बाद मुसलमान के अमल और काफ़िर के अमल में क्या फ़र्क़ हो जाता है ?

(1) अल्लाह की बंदगी

पहली बात जो इस कलिमे से आपको मालूम होती है वह यह है कि आप अल्लाह के बन्दे हैं, और किसी के बन्दे नहीं हैं । यह बात जब आपको मालूम हो गई तो ख़ुद-बख़ुद आपको यह बात भी मालूम हो गई कि आप जिसके बन्दे हैं, दुनिया में आपको उसी की मरज़ी के मुताबिक़ अमल करना चाहिए, क्योंकि उसकी मरज़ी के ख़िलाफ़ अगर आप चलेंगे तो यह अपने मालिक से बग़ावत होगी ।

(2) मुहम्मद (सल्ल०) की पैरवी

इस इल्म के बाद दूसरा इल्म आपको कलिमे से यह हासिल होता है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) अल्लाह के रसूल हैं । यह बात जब आपको मालूम हो गई तो इसके साथ ही यह बात भी आपको अपने आप मालूम हो गई कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने दुनिया की खेती में काँटे और ज़हरीले फलों के बजाए फूलों और मीठे फलों का बाग़ लगाना जिस तरह सिखाया है उसी तरह आपको बाग़ लगाना चाहिए । अगर आप इस तरीक़े की पैरवी करेंगे तो आख़िरत में आपको अच्छी फ़सल मिलेगी और अगर इसके ख़िलाफ़ अमल करेंगे, दुनिया में काँटे बोएँगे तो आख़िरत में काँटे ही पाएँगे ।

इल्म के मुताबिक़ अमल भी हो

यह इल्म हासिल होने के बाद लाज़िम है कि आपका अमल भी इसके मुताबिक़ हो । अगर आपको यक़ीन है कि एक दिन मरना है और मरने के बाद फिर एक दूसरी ज़िन्दगी है और उस ज़िन्दगी में आपको उसी फ़सल पर गुज़र करना होगा जिसे आप इस ज़िन्दगी में तैयार करके जाएँगे, तो फिर यह नामुमकिन है कि आप अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बताए हुए तरीक़े को छोड़कर कोई दूसरा तरीक़ा इख़तियार कर सकें । दुनिया में आप खेती-बाड़ी क्यों करते हैं ? इसी लिए कि आपको यक़ीन है कि अगर खेती-बाड़ी न की तो ग़ल्ला पैदा न होगा और ग़ल्ला पैदा न हुआ तो भूखे मर जाएँगे । अगर आपको इस बात का यक़ीन न होता और आप समझते कि खेती-बाड़ी के बिना ही ग़ल्ला पैदा हो जाएगा या ग़ल्ले के बिना भी आप भूख से बच जाएँगे तो हरगिज़ आप खेती-बाड़ी में यह मेहनत न करते । बस इसी पर अपने हाल को भी समझ लीजिए । जो आदमी ज़बान से यह कहता है कि मैं ख़ुदा को अपना मालिक और रसूल पाक (सल्ल०) को ख़ुदा का रसूल मानता हूँ और आख़िरत की ज़िन्दगी को भी मानता हूँ, मगर अमल उसका क़ुरआन की तालीम और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नत के ख़िलाफ़ है, उसके बारे में यह समझ लीजिए कि दर हक़ीक़त उसका ईमान कमज़ोर है । उसको

जैसा यक़ीन अपनी खेती में काश्त न करने के बुरे अंजाम का है, अगर वैसा ही यक़ीन आख़िरत की फ़सल तैयार न करने के बुरे अंजाम का भी हो तो वह कभी इस काम में ग़फ़लत न करे । कोई आदमी जान-बूझकर अपने हक़ में काँटे नहीं बोता । काँटे वही बोता है जिसे यह यक़ीन नहीं होता कि जो चीज़ वह बो रहा है उससे काँटे पैदा होंगे और वह काँटे उसको तकलीफ़ देंगे । आप जान-बूझकर अपने हाथ में आग का अंगारा नहीं उठाते, क्योंकि आपको यक़ीन है कि यह जला देगा । मगर एक बच्चा आग में हाथ डाल देता है, क्योंकि उसे अच्छी तरह मालूम नहीं है कि इसका अंजाम क्या होगा ?